लोगों ने यह जो हमला किया, वह एक आर्गनाइज्ड ढंग से किया गया और इसको दूसरे लोगों ने, नान-आदिवासीज ने, कराया ? क्या सरकार को यह सूचना भी मिली है या नहीं कि इस से पहले माले स्टेशन की घटनाओं के बारे में वहां के जेनरल मेनेजर की कम्पलेंट्स की गई थी, लेकिन उन कम्पलेंट्स की सुनवाई नहीं हुई ?

श्री के० दे० मालवीय : मैंने कलकत्ता में जेनरल मैनेजर को बुला कर इस विषय पर बात की और जो कुछ मालूम हुआ, वह मैंने इस बयान में हाउस के सामने रख दिया है। इस बारे में तहकीकात भी की जा रही है और मैं समझता हूं कि पूरे तौर से तहकीकात की जायगी। अगर कोई नई बात या नये वाकयात मालूम होंगे, तो मैं उनकी सदन के सामने रख दूंगा।

श्री त्यागी (देहरादून) : जब किसी की लड़की को छेड़ा जायेगा, तो ऐसे ही वाकयात होंगे।

श्री ह० च० सोय : माननीय मंत्री ने अपने स्टेटमैंट में कहा है कि यहां पर टेलीफ़ोन कम्यूनिकेशन को काट दिया था। क्या इस पर भी वह विश्वास करते हैं कि यह काम आदिवासी लेबर्ज ने किया है ?

अध्यक्ष महोदय : मेम्बर साहब जानते हैं कि जब तहकीकात हो रही है, तो इस बात की भी जांच की जायेंगी। अगर आज मिनिस्टर साहब कह देंगे कि उन्होंने किया है, या नहीं किया है, तो इससे तहकीकात में फ़र्क पड़ेगा।

श्री ह० च० सोय : अध्यक्ष महोदय, हम इसलिये पर्टिकुलर हैं कि इस रिपोर्ट से ऐसा जाहिर होता है कि इट इज ओनली आदवासीज हू हैव डन इट। इट इज ओनली ए वनसाइडिड व्यू।

श्री त्यागी : जिस बदमाश ने लड़की को छेड़ा था, उसका भी कुछ पता चला है या नहीं, क्योंकि यह सब किस्सा उसकी वजह से ही शुरू हुआ। जब कि इस किस्म के वाकयात होंगे, तो उनका नतीजा वायलेंस ही होगा।

श्री क० दे० मालवीय : जो बात थी, वह मैंने कह दी है। जब उसकी तहकीकात हो रही है, तो यह कहना कि किसने मालेस्ट किया है, बहुत मुश्किल है। सम्भव है जिसने मालेस्ट किया हो वह मारा गया हो, उस में।

श्री त्यागी : यह तीसरा मौका है।

Shri Daji: Has it come to your notice that the main cause of the disturbance and the widespread nature of it was that the person complained against was not immediately apprehended?

Shri K. D. Malaviya: I cannot say what the main cause is.

Mr. Speaker: Let us await the report of the investigation.

Shri Daji (Indore): If the man is not arrested, then there will be other disturbances there. That is the danger.

Shri K. D. Malaviya: I have attempted to make an objective statement of whatever I have found out after discussion. I have also mentioned that it seems that the matters are more than what have apparently come to the surface. The whole matter is under investigation and as soon as I get ample information I shall place it before the House.

12.11 hrs.

GENERAL BUDGET—DEMANDS FOR GRANTS

MINISTRY OF FOOD AND AGRICULTURE—*contd.*

Mr. Speaker: The House will now take up further discussion and voting on the Demands for Grants Nos. 41 to 46 and 127 to 129 under the

[Mr. Speaker]

control of the Minstry of Food and Agriculture.

Shr Yashpal Singh may now continue his speech.

श्री यशपाल सिंह (कैराना) : अध्यक्ष महोदय, में कल यह कह रहा था कि गंगा के पानी का हमने फायदा नहीं उ ाया । अगर हमने वहां बांध बना कर बिजली पैदा की होती और किसान की जरूरत जो पानी की है, उसको पूरा किया होता तो आज संकट हमारे सामने पदा न हुआ होता । खेती के लिए सबसे ज्यादा जरूरत जिस चीज की होती है वह पानी होता है और पानी का इन्तजाम हम नहीं कर सके हैं । श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा है कि अगर रुके हुए पानी से भी इन्तजाम हो जाए, जो पानी हमारे तालाबों में और झीलों में रुका हुआ है, उसके लिए लिफ्ट इरिगेशन का हम इंतजाम कर दें तो खेती की पैदावार को हम बढ़ा सकते हैं । १९६० और १९६१ में हमने ८१ मिलियन टन गल्ला पैदा किया था । १९६१ और १९६२ में हम ने ७९.८ मिलियन टन यानी ७ करोड़ ९८ लाख टन दा किया । जो ाइस थी वह हमारे घरों में कम रही, किसान के घर में कम रही, जब तक उसके पास अनाज रहा उसकी प्राइस कम रही और जैसे ही अनाज हमारे घरों से निकल कर बाजार में चला गया , गेहूं की कीमत बढ़ गई । यह देश मतवातर बाहर से गल्ला मंगाता रहा है । १९६० में हमने ५१ लाख ३७ हजार टन इम्पोर्ट किया । १९६१ में ३४ लाख ९५ हजार टन मंगाया गया । इसके लिए हमने १३० करोड़ रुपया दिया । १९६२ में ३६ लाख ४० हजार टन यानी १४१ क ोड़ रुपये का मंगाया गया । यह कहा जाता है कि पदावार तो बढ़ रही है लेकिन जनसंख्या में जो ृद्धि हो रही है, उसकी वजह से गल्ला हमें बाहर से मंगाना पड़ता है । अध्यक्ष महोदय, छोटे छोटे बच्चे जो होते हैं तीन सालों तक सिवाय दूध पीने के गल्ला नहीं खाते हैं। ो फिर गल्ले की कमी क्यों बाकी ोती है, इस पर भी रोशनी डाली जानी चाहिये । मैं समझता कि पैदावार करने वाली मशीनरी फेल हो गई है और हमा ी पैदावार आगे बढ़ नहीं सकी है । १९६०–६१ में जो हमारी पैदावार थी, उसके जो एदादेशुमार थे, उससे आगे हमारी पदावार नहीं है । ैसी हालत में क्या मैं आपकी आज्ञा से यह कह सकता कि माननीय बाबू अजित प्रसाद जैन ने सनू १९५९ में जब इस्तीफा दिया था उसके बाद से १९६० और १९६१ में जो पैदावार हुई वह टाप पैदावार थी, उससे ज्यादा पैदावार उसके बाद एक मन की भी नहीं हुई, उससे हम कभी भी आगे नहीं बढ़े , बल्कि ीछे हटते चले गये हैं । जो देश २६ अरब रुपये का गल्ला विलायत से लेकर खा चुका है, विदेशों से लेकर खा चुका है, वह देश कब तक जिन्दा रहेगा कब तक वह देश अपनी ोलिटिकल एग्जिस्टेंस को कायम रख सकेगा, इसको आप जान सकते हैं । गांधी जी कहा करते थे कि विलायती कपड़ा मत पहनो, विदेशी कपड़ा मत पहनों, विदेशी चीज मत लो । उन्ही गांधी जी के उत्तराधिकारी विदेशी गल्ला भी हमें नहीं खिला रहे हैं, विदेशी आटा खिला २ हैं । और भी कई मामलों में हम को विदेशों पर निर्भर आज भी रखे हुए हैं । जो कुछ गांधी जी कहा करते थे, उसका ीक उल्टा आप कर रहे । हैं

सब से बड़ी दिक्कत जो हुई वह यह हुई कि कोओप्रेटिव का नारा लगा कर किसानों के सैल्फ कान्फिडेंस को मार दिया गया, सैल्फ-कान्फिडेंस को उन से छीन लिया गया । अगर यह नारा न लगाया जाता तो किसान पैदावार को बढ़ाता । मेरे ही

जिले में मुजफ्फरनगर में एक बघेर गांव है। वहां पर आप के सैक्रेटरी गए थे, आप के डायरेक्टर गए थे। उस गांव के अन्दर चार लाख रुपया कोआपरेटिव बेसिस पर खर्च किया गया। यह चार लाख रुपया मिट्टी में मिल गया। उस में से दस हजार भी वापस नहीं आया। कोआपरेटिव फार्मिंग फेल हो गया। आज जो हालत है, उस को देखते हुए क्या आप यह खयाल कर सकते हैं कोआपरेटिव चलेगा, अनपढ़ किसान कोआपरेटिव चला सकेगा? जब से यह कोआपरेटिव का नारा लगाया गया है और जब से बाबू अजित प्रसाद जैन ने इस्तीफा दिया है, एक मन भी हम अधिक नहीं पैदा कर सके हैं, किसानों में कान्फिडेंस ही नहीं रहा, उन में उत्साह ही नहीं रहा और यही कारण है कि वे अधिक पैदावार नहीं कर सके हैं। किसान को इस बात का भरोसा ही नहीं रहा कि जिस जमीन में वह खेती करता है, उस के ऊपर उस का हक रहेगा।

यहां पर तो पढ़े लिखे लोग बैठे हुए हैं, सभी एजुकेटिड हैं, सभी वैल-ट्रेंड हैं, अच्छे से अच्छे दिमागों वाले बैठे हुए हैं। स्वतंत्र पार्टी के लोग गैर सही। हम को छोड़ कर बाकी ज्यादा तर पार्टियों के लोग समाजवाद का नारा लगाते हैं। सोशलिस्ट पार्टी के लोग समाजवाद में विश्वास करते हैं, पी० एस० पी० के लोग समाजवाद में विश्वास करते हैं और कम्यूनिस्ट भी समाजवाद के नाम पर मरे जा रहे हैं और कांग्रेसी खुद समाजवादी हैं। जब ये चारों पार्टियां मिल कर हुकूमत नहीं चला सकती हैं, मिल कर के कैबिनेट नहीं बना सकती हैं, तो अनपढ़ किसान किस तरह से मिल कर के कोआपरेटिव चला सकता है। यह ना-मुम्किन है। ये सोसाइटीज चल नहीं सकती हैं। यह चीज हो नहीं सकती है। आप को चाहिये था कि आप समाजवादियों को बुलाते और यहां पर इस संकट की घड़ी में कैबिनेट उन की बनाते और काम को चला कर दिखाते। लेकिन ऐसा नहीं किया गया है। समाजवादी सभी मिल कर काम नहीं कर सकते हैं। जब वे काम नहीं कर सकते हैं तो ये अनपढ़ लोग मिल कर काम कैसे कर सकेंगे, यह आप सोचें। यह ना-मुम्किन बात है। मैं चाहता हूं कि किसानों की भलाई के लिए कोई ठोस कदम उठाये जायें।

आज भी हम पर टैक्स लाद दिये गये हैं। एक एक पैसा हम से टैक्सों का वसूल किया जाता है। हमें छोड़ा नहीं जाता है। जब ऐसी बात है तो कोई न कोई ऐसी योजना आप को अवश्य बनानी चाहिये जिस से किसान लोग इन टैक्सों के नीचे न दब जायें। मैं आप का हितैषी हूं। मुखालिफ लफ्ज, विरोधी लफ्ज, अपोजीशन लफ्ज, इंग्लैंड का दिया हुआ है, पश्चिम का दिया हुआ है। हम लोग मुखालिफत को नहीं मानते हैं। हम लोग मानते हैं प्रेम को, हित को। हम आप के सच्चे हितैषी हैं। मैं अपने कृषि मंत्री जी से कहना चाहता हूं कि धर्म शास्त्र में, नीति शास्त्र में कहा गया है :—

"स किं सखा साधु न शास्ति योधिपम् ?
हिताश्न यः संश्रिणुते स किं प्रभुः ?"

जो प्रेम की बात कहता है, उस की बात को मान लेना चाहिये : हां ऐसा जरूर होता है

हितं मनोहारि च दुर्लभंवतः

सच्ची बात, प्रेम की बात कड़वी लगती है। लेकिन प्रेम की बात मान ली जाय तो उस से फायदा होता है। मैं आप का हितैषी हूं, मैं आप का खैरख्वाह हूं, मुझे आप से प्रेम है। मैं जो कुछ कह रहा हूं उस से आप को फायदा होगा। शहर में रहने वालों को और साथ ही साथ गांव में रहने वालों को भी इस से फायदा होगा। चार लाख साल का घाटा दे कर हम शहर के रहने वालों को दिल्ली मिल्क स्कीम का दूध पिलाते हैं। लेकिन देहात के लिये हम क्या करते हैं, इस को भी

[श्री यशपाल सिंह]

आप देखें । साढ़े सात करोड़ रुपया हम को फर्टिलाइजर से बचा है हम ने खाद तैयार किया है, उस से साढ़े सात करोड़ हमें बचा है । लेकिन इस में से हम को चार करोड़ रुपया भी सबसिडी के तौर पर नहीं दिया गया है । किसान यहां का बहुत मेहनती है । अगर उस को इंसैंटिव दिया गया होता, अगर उस का उत्साहवर्द्धन किया गया होता तो वह आप के सामने हिमालय पहाड़ की तरह गेहूं के ढेर लगा सकता था । लेकिन किसान की हालत नहीं सुधारी गई है । अमरीका के सामने हाथ पसारा गया है, दूसरे देशों से गेहूं का आयात किया गाया है, मगर किसान की मदद नहीं की गई है । आप का खैरख्वाह होने के नाते मैं आज फिर आप से कहता हूं कि यह शूगर का जो मामला है इस को आप देखें । इस के मामले में किसान को आप सिर्फ एक रुपया सात आने, एक रुपया छः आने या एक रुपया पांच आने और हद से हद एक रुपया दस आने दे कर के छोड़ देते हैं, वह बाकी दिनों में बेकार पड़ा रहता है, लेकिन उसी गन्ने से इन पिछले तीन महीनों में मिल मालिकों ने जो नफा कमाया है, एक करोड़ रुपया जो नफा कमाया है, उस में से एक पैसा भी किसान के पास नहीं गया है। सान को इस में से हिस्सा दिलाया जाना हिए था । उस को इस का हिस्सा नहीं मिला है । वही शूगर डायरेक्टोरेट जिस ने पहले धांधली मचाई थी और आप से पहले मंत्री उस में फंस गये थे आज फिर चाहता है कि हमारे माननीय कृषि मंत्री जी को उसी हालत में छोड़े और उसी स्टेज पर ला कर छोड़े जिस स्टेज के ऊपर पहले मिनिस्टर साहब को छोड़ दिया गया था । लेकिन यहां हम बैठे हुए हैं । हम उन के खैरख्वाह हैं । हम ऐसी हालत पैदा नहीं होने देंगे । अगर मैं उस वक्त यहां होता, पिछले पांच सालों में यहां रहा होता तो आज से पहले जो एग्रिकल्चर मिनिस्टर थे, उन को भी यहां से न जाने देता, उन को भी सही रास्ता दिखाता, उन को भी सही मार्ग दिखाता और उन की भी खैरख्वाही करता । चूंकि मेरा काम है नेक रास्ता दिखलाना, मेरा काम यह है कि जो आप के येसमेन आप को गुमराह करते हैं उन से भी आप को बचाऊं ।

अध्यक्ष महोदय : यह आप को एलेक्शन लड़ने के बाद इल्म हुआ है ।

श्री यशपाल सिंह : वह तो एक अलग बात थी । यह तो बहुत अच्छी बात हुई कि हम दोनों ही आ गये । वह वहां से आ गये और मैं यहां से आ गया । यह दोनों के हित में रहा ,यह कोई खराब बात नहीं है । वह मैसूर से आ गये और मैं उत्तर प्रदेश से आ गया ।

सन् १९५१-५२ में हम ने १० लाख टन चीनी बनाई और सन् १९५३-५४ में हमें इम्पोर्ट करनी पड़ी ५८ लाख टन चीनी । उस के बाद चीनी पर कंट्रोल करना पड़ा । आज यह हालत है हमारी पैदावार की कि सन् १९६०-६१ में हम ने २९।। लाख टन चीनी का उत्पादन किया । सन् १९६१-६२ में पार्लियामेंट में कानून बनाया गया कि इस से ज्यादा पैदावार न की जाय और १० फी सदी उस में कमी की जाय । १० फी सदी का मतलब यह हुआ कि हमें विलायत के आगे चीनी के लिये हाथ पसारना पड़ा । चार सालों में २० लाख टन से २६ लाख टन चीनी का हम को कंजम्पशन करना पड़ा और उस कंजम्पशन का मतलब यह हुआ कि हमारी जरूरियात बढ़ीं और चीनी की डिमान्ड बढ़ी । लेकिन सप्लाई उतनी नहीं हो सकी । हम उसी स्टेज पर हैं । मैं आज फिर कहता हूं कि मैं आप का खैरख्वाह हूं । जो शुगर डाइरेक्टोरेट है, जो ब्यूरेक्रेसी है उस के हाथ में हम अपनी ऐग्रिकल्चर मिनिस्ट्री को नहीं खेलने देंगे और उन को नेक रास्ता बतलायेंगे । हम कहेंगे कि शुगर के अन्दर जो धांधलेबाजी हो रही है उस धांधलेबाजी को दूर किया

जाय । मैं आप से पूछना चाहता हूं कि जो चीनी की दिक्कत है आज, वह किस लिये है । वह इसलिये है कि किसान को कांफिडेंस नहीं था । पहिले टाइम से दो महीने पहले चीनी की मिलें बन्द हो गईं । अगर दो महीने पहले चीनी की मिलें बन्द न होतीं तो आज शुगर की दिक्कत हमारे सामने न होती । किसान को कम से कम २ रु० मन गन्ने का भाव दिया जाय, किसान खुद गन्ने की पैदावार बढ़ायेगा । चूंकि किसान को गन्ने की पैदावार की पूरी कीमत नहीं दी जाती इसलिए हमारे सामने दिक्कत होती है और चीनी का मसला ज्यों का त्यों खड़ा रहता है ।

इस के साथ ही साथ हम ने जो चावल में लूज किया है वह भी आप के सामने है, लेकिन इस वक्त जो हालत है उस में सब से ज्यादा जरूरी यह चीज है कि शुगर डाइरेक्टोरेट को सम्भाला जाय । १ करोड़ रु० जो मिल मालिकों ने कमाया है उस का हिस्सा किसान को दिया जाय । किसान की मिनिमम प्राइस कायम की जाय । अगर मिनिमम प्राइस कायम नहीं की गई तो किसान आगे नहीं बढ़ सकेगा और देश की पैदावार भी आगे नहीं बढ़ सकेगी । आप के जो पैकेज प्रोग्राम और एक्स्टेंशन प्रोग्राम चल रहे हैं उन दोनों के एकीकरण की जरूरत है । किसान को जो दस महकमों को जाना पड़ता है, जैसा मैं ने शुरू में अर्ज किया था, उस को दस महकमों में नहीं जाना पड़ना चाहिये । बैल लेने के लिये वह ऐनिमल हस्बैन्डरी में जाता है, कर्ज लेने के लिये किसान कोग्रापरेटिव सोसायटी में जाता है, तकावी लेने के लिये किसान तहसीलदार के दफ्तर में जाता है । यू० पी० के एक माननीय मिनिस्टर साहब हैं, मैं उन का नाम नहीं लेना चाहता, लेकिन वहां की प्रोसीडिंग्स को निकाल कर आप देख लें, उन्होंने खुद यू० पी० में माना है, सब के सामने, कि एक किसान के लिये ५०० रु० तकावी का मंजूर हुआ । आठ महीने बाद जब उस को रकम मिली तो कुल ५० रु० मिला । बीच में लोगों ने रख लिया, रिश्वत में रख लिया । जब उस के पास ५० रु० पहुंचा तो वह उन रुपयों को ले कर डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के इजलास में गया और कलेक्टर साहब से कहा कि हुजूर तहसीलदार, स्याहनवीस, पटवारी, लेखपाल सब ने अपनी अपनी फीस ले ली है, यह ५० रु० हुजूर की फीस होती है, यह आप ले लें, मैं तकावी से बाज आया । मैं कहना चाहता हूं कि किसान को रुपया न दिया जाय, किसान के लिये कुआं बनाया जाय, खेत के ऊपर किसान के लिए कुआं बनाया जाय, और कुआं बना कर उस को इस लायक किया जाय कि किसान उस से अपनी पैदावार कर सके । जब तक किसान को यह अनुभव नहीं होगा कि वह खुद अपनी जमीन का मालिक है, वह को आपरेटिव के चंगुल से छूट गया है, तब तक वह आगे नहीं बढ़ सकेगा ।

इस के बाद मैं यह कहना चाहता हूं कि जो हमारी खेती की एजुकेशन या ट्रेनिंग है उस में खेती करने वाले लोग नहीं हैं । वहां पर ज्यादातर ऐसे आई० सी० एस० हैं जिन को सिर्फ डोन्ट्स पढ़ाये गये हैं । उन को पढ़ाया गया है कि काले आदमियों से नहीं मिलना चाहिये हिन्दुस्तानी आदमी से मिलना बड़ी भारी हिमाकत होती है । मैं कहना चाहता हूं कि यह काम किसान के बेटे को सौंपा जाय । जितने ऐग्रिकल्चर के कालेज और स्कूल हैं उन में किसान के बेटे हों जोकि ट्रेनिंग दें । अगर वे ही, प्रिंसिपल और प्रोफेसर हों तो वे किसानों की दिक्कत को कुछ समझ सकेंगे । जो गैर आदमी हैं वे किसान की दिक्कत को नहीं समझ सकते हैं । आज हमारे सामने जो मसला है वह यह है कि खेती का काम सिखाने की जिम्मेदारी उन को सौंपी जाती है जिन के घर का काम खेती नहीं है जो विलायत में पढ़े हैं और वहां से ऊंची

[श्री यशपाल सिंह]

ऊंची डिगरियां लाये हैं । जिन का खेती से कोई ताल्लुक नहीं है वे इस चीज को नहीं कर सकते । किसान के बेटे को यह काम सौंपा जाय ।

आज सब से ज्यादा जरुरत इस बात की है कि यहां पर एक टार्गेट कायम किया जाय कि इस साल इतने लाख टन कम गल्ला हम को बाहर से मंगवाना है इस साल उस से भी इतने लाख टन कम गल्ला बाहर से मंगाना है । जब तक यह टार्गेट कायम नहीं होगा तब तक हम लोग आगे नहीं बढ़ सकेंगे । किसान के जो अपने मसले हैं उन के ऊपर हम लोग गौर करें । किसान को जो दस जगह जाना पड़ता है वह न हो एग्रीकल्चर और इरिगेशन का काम एक मंत्रालय के नीचे आना चाहिये ।

आज किसान कुछ और ही सोचता है । जब चकबन्दी हुई तो चकबन्दी वालों को यह पता नहीं था कि इरिगेशन में कितनी दिक्कतें होंगी । पहले तो इरिगशन की दिक्कतों को समझा नहीं अब किसानों में सिर फुटौवल होती है । मेरी कांस्टिटुएन्सी यहां से ३० मील दूर है । कैराना में चकबन्दी हुई । चकबन्दी करने वालों को पता नहीं था कि किसान के सामने इरिगेशन की कितनी दिक्कतें आयेंगी । नतीजा यह हुआ कि किसान को उस इरिगेशन के लिये सिर फुटौवल करनी पड़ी और मुकदमों में लाखों रुपया खर्च हुआ । इसलिए जरूरी है कि किसान की दिक्कत को समझा जाय और इरिगेशन और एग्रिकल्चर मंत्रालयों को एक ही मंत्रालय के मातहत रक्खा जाय । जब तक ऐसा नहीं होगा तब तक यह दिक्कत हल नहीं होगी ।

आज किसान की सब से बड़ी दिक्कत यह है कि एक एकड़ में अगर वह गन्ना बोता है तो ६० रु० जुताई पर खर्च होता है ६० रु० बीज पर खर्च होता है और ५० रु० बैठ जाता है खुदाई और इरिगेशन का । अगर ५० रु० उस को और खर्च करना हो तो वह जा कर मिल मालिक के दरवाजे पर उस गन्ने को ले जा सकता है । इस तरह एक एकड़ पर कुल खर्च करने के बाद उसे मुश्किल से १२५ रु० बचते हैं । उसी पर उस का दारोमदार है । मैं कहना चाहूंगा कि उस को गन्ने की कीमत पूरी २ रु० मन दी जाय । किदवई साहब ने हमारे सामने एक फार्मूला रक्खा था कि अगर चीनी की कीमत ३२ रु० मन हो तो १ आना फी रुपया के हिसाब से उस के गन्ने की कीमत २ रु० होनी चाहिये । अगर चीनी बिकती है ४८ रु० मन में तो गन्ने की कीमत ३ रु० फी मन होनी चाहिये लेकिन चीनी ५० रु० मन तक बिकी फिर भी हम को १ रु० ४ आ० १ रु० ६ आ० या १ रु० ७ आ० तक दिया गया । आज जरूरत है कि गन्ने की कीमत बढ़ाई जाय । अगर आप रिकवरी के साथ गन्ने की कीमत को जोड़ते हैं तो उस से किसान को बड़ा नुकसान होता है । आज किसान करोड़ों रुपयों का नुक्सान उठा कर खड़े होने लायक नहीं रह गया है । चूंकि मिलों की मशीनें खराब थीं और उन से पूरी रिकवरी नहीं हो सकती थी उस की रिकवरी का घाटा किसानों से लिया गया । मेरी आप से दरख्वास्त है कि जल्दी से जल्दी यह इन्तजाम किया जाय कि एग्रीकल्चर और इरिगेशन दोनों ही एक मन्त्रालय के अधीन हों किसान को रुपया देते वक्त जो कर्ज दिया जाता है उस को देते वक्त उस की जरूरत को देख कर दिया जाय न कि जायदाद को देख कर । उसे बीसों महकमों में न जाना पड़े । यह सब महकमे एक जगह हों । उस के फर्टिलाइजर का इन्तजाम हो, उस के लिये पानी का इन्तजाम हो और उस के लिये सब से बड़ी जरुरत यह है कि वह स्वेच्छा से चकबन्दी

करवा सकें, उस के ऊपर कम्पल्सरी कंसोलिडेशन न लादा जाय ।

इन शब्दों के साथ मैं अपने मिनिस्टर साहब को इस बात के लिये मुबारकबाद देता हूं कि उन्हों ने कड़े वक्त में इस देश के लिये काफी गल्ला दूसरे देशों से मंगा कर यहां पर उस की कमी नहीं होने दी । लेकिन सच्चा काम उस दिन पूरा होगा जिस दिन हमारे खेत हमारे लिये पूरी तरह पैदा करने लगेंगे और हम सेल्फ सफिशिएंट हो जायेंगे ।

श्री ज० ब० सिंह (घोसी) : अध्यक्ष महोदय, आज हमारे सामने जो विषय है वह बहुत गंभीर है । मैं इस को इस लिये गम्भीर कहता हूं कि हिन्दुस्तान का सब से बड़ा उद्योग खेती का उद्योग है और इस सम्बन्ध में हिन्दुस्तान के अन्दर ही नहीं बल्कि बाहर से भी हमारे काफी रिश्तेदार है, और खास तौर से हिन्दुस्तान की जनता की जिन्दगी उस पर मुनहसर है क्यों कि अभी हमारे देश में और उद्योग धंधे इतने विकसित नहीं हुये हैं जिस से लोग अपना जीवन निर्वाह कर सकें । इस लिये हिन्दुस्तान की जनता की अक्सरियत इसी खेती बाड़ी से अपना जीवन निर्वाह करती है ।

मेरा यह कहना नहीं है कि सरकार ने खेती बाड़ी पर रूपया खर्च नहीं किया । पहली पंचवर्षीय योजना में सरकार ने इस पर करीब करीब ८०० करोड़ रुपये खर्च किया । दूसरी पंच वर्षीय योजना में करीब १२०० करोड़ रुपया खर्च किया और अब तीसरी पंचवर्षीय योजना में करीब २ हजार करोड़ रुपया खर्च करने जा रही है । तो हमने रुपया तो खर्च किया लेकिन इसका निर्धारित लक्ष्य से क्या सम्बन्ध है ? क्या जो लक्ष्य हमने निर्धारित किये थे उनको पहली पंच वर्षीय योजना के जरिये, या दूसरी पंच वर्षीय योजना के जरिये पूरा कर सके और क्या उन लक्ष्यों को हम तीसरी पंचवर्षीय योजना के जरिये पूरा कर सकेंगे । मेरा यह कहना है कि आप ने पहली पंचवर्षीय योजना के बाद ही कहा था कि हम देश को इतना विकसित कर लेंगे कि हमें बाहर से गल्ला मंगाने की जरूरत न रहेगी । यह लक्ष्य आपने पहली पंचवर्षीय योजना में दुहराया दूसरी पंचवर्षीय योजना में दुहराया और तीसरी पंचवर्षीय योजना में भी शायद यही आपका लक्ष्य है कि कम से कम हम अपने देश को ऐसा बना ले कि हमें बाहर से, चाहे वह २५ अरब का हो या ३० अरब का हो, गल्ला न मंगाना पड़े । यह आपका लक्ष्य रहा और इस लक्ष्य को पूरा करने के लिये आपने बहुत से कदम उठाये । आपने इस लक्ष्य को पूरा करने के लिये जमीन के बारे में सुधार किया, जमींदारी खत्म की, बहुत से कानून बनाये और आपने किसानों को जमीन का मालिक बनाने की कोशिश की और इसके आगे भी आप बहुत से रिफार्म वगैरह करते चले जा रहे हैं ।

एक बात मैं आप के जरिये मिनिस्टर महोदय से कहूंगा कि आखिर इस पर आप क्यों नहीं सोचते हैं कि १५ वर्ष के बाद अब तीसरी पंच वर्षीय योजना चल रही है और उसकी गम्भीरता को आप महसूस करते हैं और हम भी महसूस करते हैं आप अपना वह लक्ष्य क्यों नहीं पूरा कर सके कि हम देश के अन्दर इतना गल्ला पैदा करें कि हमें बाहर से गल्ला न मंगाना पड़े । इस लक्ष्य को आप अभी तक पूरा नहीं कर पाये हैं ।

श्री विभूति मिश्र (मोतीहारी) : हमारा लक्ष्य १०० मिलियन टन का है ।

श्री ज० ब० सिंह : वह तो है लेकिन आप उसे पूरा तो नहीं कर पाये । आप इसको गम्भीरता से क्यों नहीं सोचते । मैं यह नहीं कहता कि आपने यह नहीं किया और वह नहीं किया, यहां करप्शन है और वहां करप्शन है । मैं आपके जरिये मिनिस्टर साहब से

[श्री ज० ब० सिंह]

निवेदन करूंगा कि वह अपनी नीतियों पर सोचें कि उन नीतियों में तो कोई गड़बड़ी नहीं है जिसकी वजह से आप तमाम कोशिश करते हैं, तमाम आंकड़े आप देते हैं और वह लक्ष्य पूरे नहीं हो पाते हैं ।

मैं एक नीति के बारे में कहूंगा । आपने ऐलान किया कि हम किसानों को जमीन देंगे, आपने कहा कि जिनके पास अधिक जमीन है उन से लेकर हम गरीबों में बांटेंगे । दो पंचवर्षीय योजनायें समाप्त हो चुकी हैं और तीसरी चल रही है । मैं तो कहूंगा कि आप इस बात की जांच कीजिये कि इस जमीन को बांटने के लक्ष्य को पूरा कर पाये या नहीं । हमारा तो अनुभव है कि जो भी जमीन सूबे के अन्दर या जिलों के अन्दर पंचायत के जरिये या किसी और तरीक से, जो भी ऊसर, बंजर या दूसरी जमीन निकली थोड़ी बहुत, वह उनके हाथों में नहीं गयी जिनके लिये आप ऐलान करते थे, यानी छोटे किसानों के पास या भूमिहीनों के पास । वह आप नहीं कर पाये । नतीजा यह हुआ कि ज्यादा से ज्यादा जमीन अब भी कुछ फीसदी लोगों के हाथ में है । आपकी पालिसी का नतीजा यह हुआ कि लेंड का कांसट्रेशन नहीं टूटा । इन योजना के काल में आपने सोचा था कि बड़े बड़े फार्म बनेंगे और मुल्क की पैदावार बढ़ जायेगी और इस तरह हमारी खाद्य समस्या हल हो जायेगी । मैं आपसे निवेदन करूंगा कि यह नीति आपकी फेल हुई । आप तो कहेंगे कि हमने भी बांट दी और कांसालीडेशन भी कर दिया और सब कुछ कर दिया और इसलिये पैदावार बढ़ी है और बढ़ती चली जा रही है ।

अध्यक्ष महोदय : अब हमें तकरीबन एक साल हो गया नई पार्लियामेंट को आये हुए । अब मैं मेम्बरों से खास तौर पर विनय करूंगा कि वह जब अपनी तकरीर करें तो वह चेयर को मुखातिब हो कर क और गवर्नमेंट को जो कहना हो तीसरे परसन में कहें ।

श्री ज० ब० सिंह : तो मैं कह रहा था कि जो सरकार की नीति थी वह यह थी कि बड़े फार्मों द्वारा पैदावार बढ़ायी जाय जिससे बाहर से गल्ला न मंगाना पड़े । मैं आपके जरिये सरकार से कहना चाहता हूं कि वह इस नीति के बारे में सोचे कि यह नीति सही निकली या नहीं । तो पहली बात मैं सरकार से यह कहना चाहता हूं कि आपकी जो बिग पीजेंट फार्मिंग की नीति थी जिसके जरिये से आप गल्ला बढ़ाना चाहते थे वह नाकामयाब हुई और अब आप इस तरफ सोचें कि जमीन का बटवारा हो । आप कहेंगे कि जमीन का बटवारा तो हो गया । मैं सरकार से कहूंगा कि वह इकट्ठा करे कि किन किन लोगों के हाथ में कितनी जमीन है । अगर आप ऐसा करेंगे तो पता चलेगा कि एक माइनारिटी के हाथ में ज्यादा जमीन है । जो बड़े जमीदार थे उनके पास खुदकाश्त बड़ी बड़ी मौजूद है और उनके बड़े बड़े फार्म हैं । उनके पास जमीनें मौजूद हैं । और जिन लोगों के पास जमीनें थीं उनके पास अभी भी नहीं हैं । मैं अपने यहां का हाल जानता हूं । नैनीताल में बड़े बड़े लोगों के पास सौ सौ, दो दो सौ चार चार सौ और हजार हजार और दो दो हजार एकड़ जमीनें हैं, इस तरह से आप पैदावार बढ़ाने की कोशिश करते हैं । तो मेरा कहना है कि आप इस नीति पर सोचिये, यह नीति नाकामयाब रही है । आपको इस नीति पर गम्भीरता पूर्वक सोच कर आगे कदम उठाना चाहिये ।

एक बात और आपके जरिये कहना चाहता हूं । आपने खुद अपने दस्तावेज में अपना क्रिटिसिज्म किया है । यह खुशी की बात है । सरकार जब स्वयं अपनी आलोचना करती है तो मैं यह सोचता हूं कि सरकार अपनी

नीति में कुछ सुधार करेगी । आपने अपने दस्तावेज में खुद लिखा है :.....

अध्यक्ष महोदय : मैंने कुछ नहीं लिखा ।

श्री ज० ब० सिंह : मैं आपके जरिये मंत्री महोदय से कहना चाहता हूं ।

अध्यक्ष महोदय : मैं चाहता हूं कि मेम्बर साहिबान इस तरफ ज्यादा तवज्जह दें ।

श्री ज० ब० सिंह : मैं कोशिश कर रहा हूं, पर आदत पड़ने में थोड़ा समय लगेगा । तो उस दस्तावेज में सरकार ने लिखा है :

The first and second Plans show that agricultural production has advanced over the period between 1949-50 and 1960-61 at the rate of 3·84 per cent per annum, foodgrains 3·3 per cent, the annual rate of increase of area being 2·08 per cent and that of productivity 1·54 per cent.

आप जो कहते हैं कि पहली योजना के अन्दर और दूसरी योजना के अन्दर ....

एक माननीय सदस्य : अध्यक्ष महोदय तो कुछ नहीं कहते ।

श्री ज० ब० सिंह : मैं उनके जरिये निवेदन कर रहा हूं, आप तो अध्यक्ष नहीं हैं ।

अध्यक्ष महोदय : वह आपको याद करवाते हैं कि आप इस तरफ चल रहे हैं ।

श्री ज० ब० सिंह : वह खुद भी ऐसा करते हैं ।

अध्यक्ष महोदय : मैं अब से कोशिश करूंगा कि सब लोग इस पर चलें ।

श्री ज० ब० सिंह : मैं इस की कोशिश कर रहा हूं ।

अध्यक्ष महोदय, मैं निवेदन करना चाहता हूं कि इस दस्तावेज में सरकार ने खुद माना है कि पैदावार बढ़ी है और मैं भी इसको मानता हूं कि पैदावार बढ़ी है मैं उन लोगों में से नहीं हूं कि यह कहूं कि पैदावार बढ़ी ही नहीं है । पैदावार बढ़ी अवश्य है लेकिन वह कैसे बढ़ी है ? इस के लिये सरकार ने खुद बताया है कि जितनी नई जमीनें उसने तोड़ी हैं, उतनी पैदावार वह नहीं बढ़ा सकी है । ऐसा नहीं है कि यह पैदावार कोई कोआपरेटिव के जरिये, इंटेंसिव खेती के जरिये या खेतों को टैकनिकली म्प्रूव करने के कारण बढ़ी हो जो सरकार ने नई जमीनें लीं और उनको जोता है उससे पैदावार में तरक्की हुई है । सरकारी आंकड़ों से यह चीज स्पष्ट हो जाती है और खुद अहमदाबाद में जो इस बारे में बहस मुबाहिसा हुआ था उसकी रिपोर्ट और जो सरकार की दूसरी रिपोर्टस हैं वे सब यही जाहिर करती हैं कि मेनर्ली, पहली पंचवर्षीय योजना के अन्दर और दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्दर जो नई जमीनें सरकार ने तोड़ी और जोतीं, उन से पैदावार बढ़ी है ।

इस तृतीय पंचर्षीय योजना में क्या हो रहा है ? सरकार ८० मिलियन पर रुकी हुई है और वह मैं नहीं बल्कि खुद सरकार इसे एडमिट करती है कि वह इस पर रुकी हुई है । मैं सरकार से पूछना चाहता हूं कि सरकार ने लक्ष्य क्या रखा था और उसको देखते हुये पैदावार में कितना इजाफा हो पाया है ? सरकार ने कृषि उत्पादन का जो लक्ष्य निर्धारित किया था वह लक्ष्य न तो स तीसरी पंचवर्षीय योजना के पहले साल में पूरा हुआ और न ही उस के दूसरे साल में पूरा होने वाला है । खेती की पैदावार में १.६ परसेंट का इजाफा किया है जब कि सरकार का लक्ष्य था कि वह इन दो सालों में कम से कम ६ परसेंट बढ़ा देगी लेकिन उतना सरकार नहीं बढ़ा पाई है । सरकार को इस पर गम्भीरतापूर्वक सोचना चाहिये । इससे साफ जाहिर होता है, कि पैदावार, मेनर्ली नई जमीनें जो कि सरकार ने तुड़वायीं और जुतवाई,

[श्री ज० ब० सिंह]

इन के कारण उसमें इजाफा हुआ है न कि किसी और कारण से । सरकार को कोआपरेटिव से या इम्प्रूव्ड मैथड आफ फार्मिंग की वजह से पैदावार में इजाफा नहीं हुआ है । सरकार भी इस बात का दावा नहीं करती है और न ही ऐसा हम लोग मानते हैं । ऐसी हालत में सरकार को देखना चाहिये कि वह किन चीजों में फेल हो रही है । अभी अहमदाबाद में सभी एक से एक विद्वान लोग जुटे हुये थे और उन्होंने कहा था :—

"Steady increase in production in all parts, and adoption of improved technique so that the cost of production should come down."

एक बात यह सरकार और यह पूरा डिपार्टमेंट जानता है कि हमको चारों तरफ़ पैदावार को बढ़ाना चाहिए । सरकार की पैदावार करने की जो टैकनीक है उसको इम्प्रूव करना चाहिए और मौडर्न लाइंस पर उसको डेवलप करना चाहिए ताकि बैटर रिजल्ट निकल सके । पैदावार करने में पर एकड़ जो खर्चा पड़ता है वह खर्चा कम पड़े । किसी देश के अंदर जितना ही कम खर्चा पड़ता है पर एकड़ या पर दो एकड़ पैदावार करने में जितनी कम लागत आती है, उतना ही वह देश उन्नतिशील कहा जाता है । किसी देश के विकसित होने की यही कसौटी आज कल मानी जाती है । उसके लिए कहा जायगा कि अमुक देश ज्यादा से ज्यादा कृषि उत्पादन के मामले में टैकनिकली इम्प्रूव्ड है । अपने देश में एक एकड़ भूमि पर पैदावार उगाने में जितना खर्चा पड़ता है उसका अगर मूल्यांकन किया जाय तो वह और देशों से ज्यादा पड़ता है । इस चीज को अहमदाबाद में खुद सरकार ने स्वीकार किया है । इस देश का खर्चा और देशों से ज्यादा इसलिए पड़ता है क्योंकि इस देश में उतने इम्प्रूव्ड मैथड्स आफ फार्मिंग नहीं हैं जितने कि अन्य देशों में होते हैं । यहां लेबर का काफी खर्च जुड़ता की है जब कि वह नहीं जोड़ेंगे । अब इन सारी चीजों को न तो किसान ही देखते हैं और न सरकार ही उसके लिए कुछ करती है । वैसे सरकार और किसान दोनो इस चीज को स्वीकार करते हैं कि खेती की टैकनीक में इम्प्रूवमेंट होना चाहिए ताकि पैदावार भी बढ़े और खर्चा कम आये । सारे मुल्क के अंदर इस तरह की स्कीमें बनाई जायें, इस तरह के प्रोग्राम्स बनाये जायें ताकि हर जगह पैदावार बराबर मात्रा में बढ़ें । खेद का विषय है कि इन दोनो बातों में सरकार नाकामयाब रही है । लेकिन मैं खाली यही कह कर संतुष्ट नहीं हो जाता कि सरकार बड़ी नाकामयाब रही है, मैं चाहूंगा कि सरकार अपनी स्कीमों के बारे में पुनर्विचार करे और उनमें आवश्यक सुधार करे ।

सरकार की जो खेती के उत्पादन में वृद्धि करने की स्कीमें हैं जैसे कि कोआपरेटिव फार्मिंग की, या इम्प्रूव्ड मैथड्स आफ फार्मिंग की, मैं मानता हूं कि वे जरूरी और सही स्कीमें हैं । इतने छोटे छोटे लैंड्स को कोआपरेटिव फार्मिंग के जरिए जब तक कंसोलिटेड नहीं किया जायेगा, जाहिर है कि पैदावार को नहीं बढ़ाया जा सकता है । कोआपरेटिव फार्मिंग को मैं सही चीज मानता हूं ।

Shri P. B. Patel (Patan): Small farms will produce more per acre than bigger farms.

Shri J. B. Singh: That is a controversial claim.

बड़े फार्मर्स तो हमेशा यही चाहते हैं । लेकिन उस कोआपरेटिव की स्कीम को अगर देखा जाय तो मालूम होगा कि उसमें कितनी गड़बड़ चलती है । मैं अभी आ रहा था तो मेरे पास देवरिया से एक लैटर आया जो कि इस प्रकार है :—

"A month has passed since I wrote a letter and sent the papers in connection with the

consideration of Dehri Cooperative Farming Society."

डेहरी का नमूना मैं पेश करना चाहता हूं। डेहरी में एक कोआपरेटिव सोसाइटी है। मैं खुद वहां देख आया हूं। वह लोग पिछले ६ महीने या साल भर से यह चाह रहे हैं कि लैंड को कंसोलिडेट कर दिया जाय तभी कोआपरेटिव फार्मिंग का कुछ मतलब होना है नहीं तो एक ज़मीन यहां और एक ज़मीन वहां, कैसे वह पैदावार की रक्षा और अन्य सारी चीजें कर सकते हैं। लेकिन आज तक उसको नहीं किया गया है। रैवेल्यू डिपार्टमेंट ६ महीने से उन्हें दौड़ा रहा है। अभी तक कुछ नहीं हुआ है। he has written a letter me to. मैं कहता हूं कि कोआपरेटिव फार्मिंग करके ही पैदावार को बढ़ाया जा सकता है और खर्चा भी कम किया जा सकता है। दूसरा कोई तरीक़ा नहीं है। लेकिन जिस तरीक़े से कोआपरेटिव की सरकार की स्कीमें चल रही हैं उस तरीक़े से देश में खेती का विकास नहीं हो पायेगा। लेकिन जैसा कि अभी एक भाई ने कोट कर के बतलाया कि कोआपरेटिव्स में करप्शन चलता है और इस तरह सरकार खुद उनको मौक़ा देती है कि वह इस बिना पर कोआपरेटिव फार्मिंग की मुख़ालफत करें और यह कहें कि कोआपरेटिव्स के ज़रिए देश का कृषि उत्पादन के क्षेत्र में विकास नहीं होगा। लेकिन मैं यह स्पष्ट कर दूं कि मैं उन माननीय सदस्य से इसमें सहमत नहीं हो सकता और मैं समझता हूं कि कोआपरेटिव फार्मिंग के जरिए ही इस देश में खेती का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। लेकिन चूंकि हम जानते हैं कि सरकार को कोआपरेटिव्स कैसे चलती है, उनमें हम जाते हैं और ऐलेक्शंस में उनके हिस्सा भी लेते हैं .....

डा० राम सुभग सिंह: चीन में कम्यूंस में क्या हुआ!

श्री ज० ब० सिंह: अब वह फेल हो रहे हैं तो क्या आप अपनी कोआपरेटिव्स को भी फेल करेंगे? मैं तो यह चाहता हूं कि सरकार की कोआपरेटिव्स फलें फूलें और देश का कृषि उत्पादन दिनों दिन बढ़े लेकिन मैं यह ज़रूर चाहूंगा कि कोआपरेटिव्स के मामले में सरकार गौर से देखें उनकी वर्किंग में आवश्यक सुधार करे। मैं इस अवसर पर डिटेल्ज में नहीं जाता कि कैसे सरकार के काम हो रहे हैं। और कैसे उसके फेलयर्स हो रहे हैं। सरकार ने विलेज लैवल वर्कर्ज की एक फ़ौज सी बना रखी है, जो कि हिन्दुस्तान में ४०, ४५ हज़ार या लाख हैं। मेरी शिकायत यह नहीं है कि इतने वर्कर्ज नहीं होने चाहिए। मेरी शिकायत यह है कि ये विलेज लैवल वर्कर्ज कुछ नहीं करते हैं। बल्कि वे देहातों में घूम कर पालिटिक्स, राजनीति, करते हैं। मंत्री महोदय जा कर पर्सनली देखें। वह तो बिहार के रहने वाले हैं। वह तो जानते हैं। वह खेतिहर भी हैं। पटिल साहब तो खेती के बारे में नहीं जानते, लेकिन वह तो जानते हैं। वह इस बात को देखें कि चालीस हज़ार या चालीस लाख की यह फ़ौज क्यों बेकार रखी हुई है।

सरकार का प्लानिंग का जो तरीक़ा है, वह इतना गड़बड़ है कि वह पैदावार को बढ़ने नहीं देता है। देहातों में हम लोगों का अनुभव है—और यह बात सारे हिन्दुस्तान पर लागू होती है—कि सड़क बनाने वाले सड़क बना देते हैं। सड़क कहां बनेगी, इस से कोई मतलब नहीं है। कुंए खोदने वाले कुंए खोद देंगे। वह कहां खोदा जायेगा, इस से उन को कोई मतलब नहीं है। इसी तरह बांध बांधने वाले बांध बना देते हैं, लेकिन उस की उपयोगिता आदि के बारे में वे कोई ध्यान नहीं देते। अलग अलग डिपार्टमेंट हैं, लेकिन उन में कोई कोआर्डिनेशन नहीं है। जब ये सब काम कर देंगे, तो उस के बाद यह होगा कि बरसात के वक्त बांध टूट जायेंगे और पहले जितना भी पानी गांवों से बाहर निकल जाता था, वह अब गांवों में ही जमा हो जाता है।

आज तरह तरह के विभाग बना दिए हैं। कम्यूनिटी डेवेलपमेंट डिपार्टमेंट, को-आपरेशन

[श्री ज० ब० सिंह विष्ट]

मत्स्य विभाग—मछली विभाग, सिंघाड़ा विभाग आदि । उन सब विभागों की अलग अलग कार्यवाही होती है । सरकार का कोई को-आर्डिनेटेड ऐक्शन नहीं है । इस लिए मैं सरकार से अनुरोध करूंगा कि वह को-आर्डिनेशन करे । उस के बगर वह काम को नहीं चला सकती और उस की सारी स्कीमें रखी रह जायेंगी । इस प्रकार स्वतंत्र पार्टी को उस की निन्दा करने और को-आपरेटिव मूवमेंट को फ़ेल करने का बराबर मौका मिलेगा ।

प्राइसिज़ का मसला बड़ा टेढ़ा है । अभी अभी बंगाल के बारे में मैं ने अख़बार में पढ़ा है कि वहां पर चावल २२ रुपए मन था और वहां के चीफ़ मिनिस्टर कहते हैं कि २५, २६, ३० रुपए मन हो गया है । आज गल्ले की प्राइसिज़ में इतना फ्लक्टुएशन हो रहा है कि जब किसान का गल्ला कटता है, तो वह सारे का सारा ८, १०, १२ रुपए मन के हिसाब से बिक जाता है और जब किसान ख़रीदने जायगा, तो वही गल्ला उस को १५, १६, २४ रुपए मन ख़रीदना पड़ेगा । वह स्कीम सही है कि सरकार साल भर पहले मूल्यांकन करे और जब किसान बोने जाता है, उस वक्त वह रेट फ़िक्स करे । तब तो किसान को इन्सेन्टिव होगा और उस को अधिक उत्पादन करने की प्रेरणा और प्रोत्साहन मिलेगा । सरकार को मिल-मालिकों को ज्यादा इन्सेन्टिव देने की कोशिश नहीं करनी चाहिए, जैसा कि हमारे दोस्त ने शूगरकेन के बारे में कहा । सरकार मिल मालिकों को ज्यादा इन्सेन्टिव और ज्यादा रुपया देने की कोशिश करती है और इस प्रकार गल्ले और दूसरी चीज़ों की पैदावार बढ़ाना चाहती है । इस तरह का इन्सेन्टिव देने की कोशिश सरकर को नहीं करनी चाहिए ।

मैं निवेदन करूंगा कि मुख्य रूप से उन चीज़ों को इन्सेन्टिव क्यों नहीं दिया जाता है, जिन से सरकार को फ़ारेन एक्सचेंज मिलता है । आन्ध्र में तम्बाकू के लिए अभी टैक्स बढ़ाया गया, हालांकि तम्बाकू से सरकार को फ़ारेन एक्सचेंज मिलता है । इस से वहां क्राइसिस पैदा हो गया । यू० पी० में भी क्राइसिस पैदा हो गया । जिन चीज़ों के ज़रिये से इस देश को फ़ारेन एक्सचेंज मिलता है, उन को सरकार इन्सेन्टिव क्यों नहीं देती है ? उन की मज़बूती से मदद करनी चाहिए ।

पतलून पहन कर किसानों को आर्गनाइज़ करने का जो ब्यूरोक्रेटिक तरीका है, उस को बन्द किया जाये । पतलून पहनने वाले देहात के नहीं होंगे । जो लोग वास्तव में किसान हैं, जो सही मानों में किसानी के बारे में जानते हैं, उन को गांवों में भेजा जाए । तब जा कर यह काम होगा । पतलून वाले यह काम नहीं कर पायेंगे ।

Mr. Speaker: According to intimation received from Members, the following cut motions are desired to be moved to Demands for Grants relating to the Miinstry of Food and Agriculture. The Members may now move them subject to their otherwise being admissible. Cut Motions Nos. 1 to 11 and 13 to 19 as shown in List Nos. 1 and 2.

Shri H. C. Soy (Singhabhum): Sir, I beg to move:

> "That the Demand under the head 'Ministry of Food and Agriculture' be reduced by Rs. 100."

[Failure to strike a proper balance between the needs of afforestation and agriculture specially in the industrial zone of Bihar-West Bengal and Orissa and Madhya Pradesh. (1).]

Shri Ram Sewak Yadav (Bara Banki): Sir, I beg to move:

> "That the Demand under the head 'Ministry of Food and Agriculture' be reduced by Rs. 100."

[Failure to check wasteful expenditure in the Ministry. (2).]

"That the Demand under the head 'Agriculture' be reduced to Re. 1."

[Failure to (i) attain self-sufficiency in food, (ii) raise a food army, (iii) provide irrigational facilities, (iv) enable farmers to get fair prices for their produce of foodgrains and other raw materials, (v) provide land to rehabilitate the Harijans, Tribals and people of backward classes. (3)].

Shri Berwa Kotah (Kotah): Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head 'Agricultural Research' be reduced by Rs. 100."

[Unsatisfactory working of the scheme of improved seed farms (4)]

"That the Demand under the head 'Forest' be reduced by Rs. 100."

[Problem of landless adivasis living in forest area and unauthorised cultivation by them of forest land. (5)].

Shri Sezhiyan (Perambalur): Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head 'Ministry of Food and Agriculture' be reduced to Re. 1."

[Policy regarding price of Paddy. (6)].

Shri Dinen Bhattacharya (Serampore): Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head 'Ministry of Food and Agriculture' be reduced to Re. 1."

[Policy regarding food prices. (7)].

Shri Koya (Kozhikode): Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head 'Ministry of Food and Agriculture' be reduced by Rs. 100."

[(i) Need for establishment of an agricultural College in Manjeri, a Forestry College in Nilambur and one more Veterinary College in Kerala State, (ii) need for starting a fisheries scheme like the Indo-Norwegian scheme in Tanur area of Kerala State, (iii) need to start a fishing harbour in Ponnani and Tanur in Kerala, and (iv) need to take steps for the development of fisheries in Malabar area of Kerala State. (8)]

Shri Dinen Bhattacharya: Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head 'Ministry of Food and Agriculture' be reduced by Rs. 100."

[(i) Failure to check wasteful expenditure in the Food and Agriculture Department, (ii) delay in revalidation of the Agrarian Relations Act of Kerala with retrospective effect, and (iii) failure to check the abnormal rise in prices of rice in West Bengal. (9)]

Shri Sezhiyan: Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head 'Ministry of Food and Agriculture' be reduced by Rs. 100."

[(i) Failure to fix reasonable prices of agricultural commodities on the basis of cost of production, (ii) need to set up Price Committee to advice the Government to fix the prices of agricultural products, (iii) need to establish an Agricultural University in the South, (iv) need to establish agricultural schools in every district, and (v) need to increase the milk supply and the per capita consumption of milk by the people. (10)]

Shri Yogendra Jha (Madhubani): Sir, I beg to move:

[Shri Yogendra Jha]

"That the Demand under the head 'Agriculture' be reduced to Re. 1."

[Failure to (i) attain self-sufficiency in food, (ii) fix a minimum remunerative price of the agricultural products, (iii) raise the land army, (iv) provide irrigational facilities and utilise full irrigation potentials and (v) attract farmers to co-operative farming. (11)].

Shri Koya: Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head 'Agriculture' be reduced by Rs. 100.

[Need to (i) provide schemes for helping and developing betel cultivation; and (ii) control pests and diseases damaging orange orchards in Wyanad in Kerala State. (13)]

Shri Dinen Bhattacharya: Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head 'Agriculture' be reduced by Rs. 100.

[(i) Failure to check the food adulteration in the country, (ii) failure to open more Farm Information Bureau in the country; (ii) failure to attain self-sufficiency in food, (iv) failure to provide irrigational facilities, (v) failure to enable farmers to get fair prices for their produce of foodgrains and other raw materials, (vi) failure to provide land to rehabilitate Harijans, (vii) need to render adequate help and assistance to the potato growers of West Bengal, (viii) failure to guarantee reasonable price to jute growers, and (ix) need to arrange for more loans for the agriculturists of West Bengal. (14)].

Shri Sezhiyan: Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head 'Agriculture' be reduced by Rs. 100."

[(i) Failure to give land to landless peasants, (ii) need for timely credit facilities to cultivators, (iii) need for adequate timely and cheaper supply of fertilisers and agricultural implements to the cultivators, (iv) need to popularise scientific farming methods. (15)].

Shri J. B. Singh: Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head Agricultural Research be reduced by Rs. 100."

[(i) Failure to improve the fisheries in the country, (ii) failure to open more Agricultural Universities and Agricultural Institutions, and (iii) unsatisfactory working of the scheme of improved seed forms. (16)].

"That the Demand under the head Animal Husbandry be reduced by Rs. 100."

[Failure to improve the breed of cows in the country. (17)].

Shri Sezhiyan: Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head Animal Husbandry be reduced by Rs. 100".

[(i) Failure to improve the quality of cattle stock, (ii) need to encourage poultry farming in rural areas, and (iii) need to develop modern fishing harbours and deep-sea fishing in the South. (18)].

Shri J. B. Singh: Sir, I beg to move:

"That the Demand under the head Forest be reduced by Rs. 100."

[Failure to maintain and increase the forest area. (19)].

श्री विभूति मिश्र (मोतिहारी) : अध्यक्ष महोदय, मैं बरसों से इस समस्या का अध्ययन करता आ रहा हूं कि खेती की पैदावार कैसे बढ़ाई जाए। उस के लिए खाद, बीज और पानी तो जरूरी चीज हैं, लेकिन सबसे जरूरी यह है कि एक प्राइस सपोर्ट पालिसी अपनाई जाए, जिसको थर्ड फाइव-ईयर प्लान में सरकार ने मान लिया है। लेकिन सरकार जिस तरह से उसको काम में ला रही है, उससे मुझे संतोष नहीं है।

अध्यक्ष महोदय : माननीय सदस्य इस बात का खयाल रखें कि डिमांडस में टाइम लिमिट पंद्रह मिनट हुआ करती है।

श्री विभूति मिश्र : मैं आपके सामने एक उदाहरण रखना चाहता हूं। सरकार ने गेहूं का दाम १३ रुपए मन निश्चित किया है, लेकिन मैं देखता हूं कि यहां पर दिल्ली के बाजार में पंजाब की गेहूं, बीस, बाइस रुपए मन बिक रही है, और इस तरह किसान को ६ रुपए का घाटा होता है। सरकार सब चीजों का दाम तो निश्चित नहीं कर सकती, लेकिन किसान के द्वारा पैदा की हुई जो जरूरी चीज हैं, जैसे गेहूं, चावल, ज्वार, बाजरा, आदि, सरकार उनकी कास्ट आफ प्राडक्शन निकाल कर उनके दाम निश्चित करे।

मैं चाहता हूं कि सरकार इसके लिए एक बोर्ड बनाए, जिसमें किसानों और कन्ज्यूमर्ज के रिप्रेजेन्टेटिव्ज रहें। सरकार इस बारे में फैसला चाहे अपने हाथ में रखे, लेकिन वह उन लोगों की बात सुने कि उनका खर्च क्या होता है। जब तक सरकार ऐसा नहीं करती है, तब तक कुछ नहीं होने वाला है। मैंने देखा है कि प्लानिंग कमीशन भी राजी है और हमारे कृषि मंत्री भी इसके लिए परेशान हैं। जब सब इस राय के हैं, तो हमारी समझ में नहीं आता कि इसके लिए कोई बोर्ड क्यों नहीं बनाया जाता है। जब तक यह बोर्ड नहीं बनाया जायेगा, तब तक खेती की पैदावार में वृद्धि होना मुश्किल है।

इसके साथ साथ जब सरकार कीमत निश्चित करे, तो वह यह भी देखे कि किसान को वह कीमत मिलती है या नहीं। काटन की कीमत निश्चित की गई। काटन की पैदावार ज्यादा हो गई। काटन एरिया के भाई जानते हैं कि किसानों को किस तरह से तकलीफ हुई।

श्री देवराज शि० पाटिल (यवतमाल) : वह कीमत किसानों को नहीं, व्यापारियों को मिल रही है।

श्री विभूति मिश्र : यही तो हम चाहते हैं कि किसानों को मिले।

जूट का दाम ३० रुपए मन निश्चित किया गया, लेकिन बिहार, आसाम, बंगाल और उड़ीसा में, इन चार जूट-ग्रोइंग सूबों में, जूट १२, १५, १६ रुपए मन बेचना पड़ा। कभी बता दिया जाता है कि रेल-ट्रांसपोर्ट की सहूलियतें नहीं है और कभी कुछ और बता दिया जाता है। हमारे कृषि मंत्री बहुत जबरदस्त आदमी हैं। मैं उनको कांग्रेस में भी देखता हूं और बाहर भी देखता हूं। मैं चाहता हूं कि वह जो कीमत निश्चित करें, उसे किसानों को दिलायें। जब उन्होंने कीमतें निश्चित कर दीं और फिर भी वे किसानों को न मिलें, इससे बढ़ कर दुख की कोई बात नहीं है। खेती की पैदावार बढ़ाने के सम्बन्ध में जो आपका एडमिनिस्ट्रेटिव सेटअप है, वह सैट अप उतना कारगर साबित नहीं हो सका है, जितना उसको होना चाहिये था। हर एक जिले में डिस्ट्रिक्ट एग्रिकलचरल आफिसर है, हर एक ब्लाक में एक्सटेंशन

[श्री विभूति मिश्र]

सुपरवाइजर होता है। मगर यह जो अरेंजमेंट है यह कारगर साबित नहीं हुआ है और अगर कारगर साबित हुआ होता तो खेती की पैदावार बढ़ सकती थी। सरकार ने पहले ग्रो मोर फूड डिपार्टमेंट खोला। उसके बाद अब ब्लाक डिपार्टमेंट खोला और पैकेज प्रोग्राम को शुरू किया। अब इंटेंसिव प्रोग्राम चलाया जा रहा है। साढ़े तीन सौ मिलियन एकड़ हिन्दुस्तान में जमीन है और पांच पांच या चार चार डिस्ट्रिक्टों में आप पैकेज प्रोग्राम अगर शुरू करते हैं, तो उससे क्या हो सकता है। अगर आप चाहते हैं कि खेती की पैदावार बढ़े तो आपको चाहिये कि जो आपका आदमी है, उसको आप जो कृषि करता है जो खेती करता है, उसके साथ लगा दें और वह उनको बताये कि क्या करना चाहिये, उसको प्रापर गाइडेंस दे, राय दे और चला जाये। किसान खुद पैदा करेगा। हमारे डा० राम सुभग सिंह जी के जिले में पैकेज प्रोग्राम हो रहा है। वहां पर जिस तरह से फौज में काम होता है, उस तरह से काम हो रहा है। उसका आप खर्च तो जोड़ें कि कितना पड़ता है। मैं मानता हूं कि लैबोरेटरी से आप काम लें, उसका एक महकमा खोलें और किसानी के बारे में अनुसंधान करें और उस अनुसंधान का लाभ किसान को पहुंचायें और किसान उस को अपने काम में लाये। यह ठीक है और ऐसा होना भी चाहिये। हमारे डा० राम सुभग सिंह जी ने कहा था कि डिस्ट्रिक्ट एग्रिकलचर आफिसर की जो पोस्ट है, यह सेंट्रल गवर्नमेंट के तहत होनी चाहिये, जिस तरह से डी० एम० की पोस्ट होती है उस तरह से होनी चाहिये। यह ठीक है।

13 hrs.

अब आप देखें कि शहरों की कितनी आबादी है और देहातों की कितनी है, शहरों से नेशनल इनकम में आपको क्या मिलता है और देहातों से क्या मिलता है और शहरों पर आप कितना खर्च करते हैं और देहातों पर कितना करते हैं। ८२ परसेंट लोग गांवों में रहते हैं और नेशनल इनकम का ४५ फीसदी आपको खेती से मिलता है और ५५ फीसदी दूसरी चीजों से मिलता है। ४५ परसेंट नेशनल इनकम में ८२ फीसदी आदमी देते हैं और ५५ फीसदी जो १८ फीसदी शहरों में रहते हैं, वे देते हैं। यह कहा जा सकता है कि शहरों और गांवों का झगड़ा क्यों खड़ा किया जा रहा है। यह कोई झगड़ा नहीं है जो मैं खड़ा कर रहा हूं। प्यारेलाल जी ने जो गांधी जी के विचार थे अपनी पुस्तक में लिखा है उनको अगर पढ़ा जाए तो आपको पता चलेगा कि गांधी जी कहते थे कि शहर वाले चाहते हैं कि गांव वालों को लूट लें और गांव वाले लूटे जाते हैं। हम में से बहुत से माननीय सदस्य, अधिकतर माननीय सदस्य इन ८२ फीसदी लोगों के वोटों से ही चुनकर यहां आए हैं। लेकिन यहां आने के बाद हममें से बहुत से लोग खेतीहर भूल जाते हैं, किसान को भूल जाते हैं, देहात में रहने वालों को भूल जाते हैं। जो कुछ किसान पैदा करता है, उसकी कीमत उसको कम मिलती है और जो कुछ शहर वाला तैयार करता है, उसकी कीमत गांव वाले को अधिक देनी पड़ती है। हम शहर वालों को खिलाने वाले हैं। हमारी चीज के दाम तो हमको कम मिलते हैं और हमारी चीज से ही जो वस्तु बनाई जाती है, उसीके दाम हमको बहुत ज्यादा देने पड़ते हैं आप रुई को ले लें। उससे कपड़ा बनता है। कपड़े के दाम तो अधिक होते हैं, बहुत ज्यादा होते हैं लेकिन रुई के दाम किसान को कम मिलते हैं। मैं चाहता हूं कि खेती से पैदा की हुई चीज के दाम और उसके द्वारा फैक्ट्री से तैयार किए हुए सामान की जो कीमत है, इन दोनों कीमतों में आप लिंक लगायें। अगर लिंक नहीं

लगता है तो किसान को बहुत घाटा रहेगा। मैं चाहता हूं कि इस ओर आपका ध्यान जाए।

किसान को आप भूल नहीं सकते हैं। मार्क्स ने कहा है कि लेबर चाहे तो क्रान्ति कर सकती है। मार्क्स के बाद गांधी जी ने लिखा है कि किसान चाहे तो क्रान्ति पैदा कर सकता है। हमारे जिले में गांधी जी साउथ अफ्रीका से वापिस आने के बाद आए। चम्पारन में वह आए। उन्होंने देखा कि चम्पारन के किसान किस तरह से क्रान्ति करने के लिए तैयार हो गए। चीन आज हमारा दुश्मन है। हमारा उसके साथ झगड़ा है। चीन में जो शहर का रहने वाला आदमी है वह माऊ त्से तुंग की क्रान्ति के बाद खुद कहता है कि मैं किसान हूं, पेजेंट हूं। उसने साबित किया है कि किसान क्रान्ति कर सकता है। हमारे पाटिल साहब बड़ी जबरदस्त किसान की वकालत करते हैं। मैं उनसे कहना चाहता हूं कि वह जितनी वकालत करत हैं किसान की, उतना ही यह क्रान्ति करने के लिए भी तैयार हों ताकि किसान का जो उचित हक है, यह उसको मिले।

अब जो टैक्स आपने लगाये हैं, उनको भी आप देखें। इन टैक्सों से किसान पर जो बोझा है, वह बढ़ा है। किसान का जो सामान है, उसको लाने और ले जाने पर जो खर्चा पड़ता है, ट्रान्सपोर्ट पर जो खर्चा पड़ता है, उसमें अब वृद्धि हो जाएगी लोहे पर जो टैक्स लगा है, उसकी वजह से किसान जो खेती के औजार खरीदता है उनके दाम उसे अधिक देने पड़ेंगे। सिमेंट पर टैक्स बढ़ा है इसकी बजह से माइनर इरिगेशन चाहे कूएं का हो या कोई इस तरह का दूसरा काम हो, उसका खर्चा भी बढ़ जायेगा। देश सरकारों ने सेल्ज टैक्स भी लगा दिये हैं। इस का असर भी हम किसानों पर पड़ेगा। सब मिला कर मेरा अपना अंदाजा है कि किसान की चीज के दाम एक दो रूपया मन बढ़ने चाहिये क्योंकि इन टैक्सों का असर किसान पर पड़ेगा। जब किसान द्वारा उत्पादित माल के दाम बढ़ेंगे तो हमारे जो अखबार वाले हैं, जो खबर देने वाले हैं, ये शोर करेंगे कि दाम बढ़ गये हैं। तब ये इस बात का ख्याल नहीं करेंगे कि किसान पर इन टैक्सों का क्या असर पड़ा है। इन बातों का भी मैं चाहता हूं कि ये ख्याल कर लें। गरीब किसान का भी आप ख्याल रखो और उनकी चीज के दाम भी उनको अधिक दो। फर्टिलाइजर के दाम बराबर बढ़ गए हैं। कैरोसीन आयल जो किसान इस्तेमाल करता है, उसके दाम भी किसान को सात नये पैसे या दस नये पैसे एक बोतल के पीछे अधिक देने पड़ेंगे। इन सब का किसान के जीवन पर असर पड़ेगा। एजुकेशन सैस उन पर लग रहा है। हमारे यहां कार्ट टैक्स भी है। बैलगाड़ी पर छः पया और टायर गाड़ी पर बारह रूपया हम को देना पड़ता है। ये सब चीजें हैं, जिन का ख्याल माननीय मंत्री जी को करना चाहिये।

अब गन्ने की बात मैं आप से कहना चाहता हूं। हमारे जिले में नौ शूगर फैक्ट्रीज हैं। पारसाल पांच करोड़ मन गन्ना हुआ था। इस साल पौने दो करोड़ मन गन्ना हमारे जिले में हुआ है। इन फैक्ट्रीज के खुलने से पहले आप दस मील में घूम आते आप को एक भी सफेद मकान नहीं मिल सकता था। आज इस गन्ने की वजह से हमारे जिले में पांच दस सफेद मकान आप को देखने को मिल जायेंगे। लास्ट यीअर गन्ने की फसलों पर हमारे मंत्री जी ने मिल वालों से पूछा, हमारे चीफ मिनिस्टर साहब से पूछा। लोगों से तो इन्होंने पूछ लिया। लेकिन जिन्होंने इन्हें देश का मंत्री बनाया, उन से उन्होंने नहीं पूछा। पार्लिमेंट के मैम्बर सैंट्रल गवर्नमेंट को बनाने वाले है, सैंट्रल मिनिस्टर्ज को बनाने वाले है। हम से कुछ भी नहीं पूछा गया। आप पूछते हैं चीफ मिनिस्टर से, आप पूछते है मिल मालिकों से, हम से आप नहीं पूछते हैं।

[श्री विभूती मिश्र]

हम जो किसानों के वोटों से यहां चुन कर आये है, उन से क्यों नहीं पूछा जाता है, यह मेरी समझ में नहीं आया। आप को हम से भी पूछना चाहिये था कि गन्ने के बारे में, चीनी के बारे में क्या इंतजाम किया जाये। आगे कोई बात हो तो हम से भी आप पूछ लिया करें, यह मेरा आप से निवेदन है।

१९६०-६१ में जो चीनी की पैदावार हुई वह २९ लाख टन थी। १९६१-६२ में वह घट गई और २७.१४ लाख टन के करीब थी। १९६२-६३ में मेरा अंदाजा है कि २०-२१ लाख टन से अधिक नहीं होगी। दस लाख टन हमारे पास पहले का बचा हुआ है। इस तरह से कुल चीनी हमारे पास ३१ लाख टन होगी। २६ लाख टन पिछले साल हम खा गये थे। इस साल हम और भी अधिक खायेंगे, एक तो आबादी के बढ़ जाने की वजह से और दूसरे चीनी कुछ अधिक खाने की हम में प्रवृत्ति भी पैदा हो गई है। मेरा अंदाजा है कि हम २७ लाख टन खायेंगे। चार लाख टन से कुछ ज्यादा हम एक्सपोर्ट करने वाले हैं। इस तरह से पिछले साल की बची हुई चीनी और इस साल की पैदावार सब बराबर हो जायेगी और हमारे पास कुछ नहीं बचेगा। अगले साल गन्ने की फसल अच्छी नहीं होने वाली है। माननीय मंत्री जी कहते है कि ३२ लाख टन चीनी पैदा होगी। मैं कहना चाहता हूं कि अगर ३२ लाख टन चीनी पैदा हो जायेगी तो मैं सत्यनारायण जी की कथा कराऊंगा। ३२ लाख टन चीनी पैदा नहीं होने वाली है। जहां तक शूगर पालिसी का सम्बन्ध है, मैं माननीय मंत्री जी से निवेदन करना चाहता हूं कि वह हमारे जिले में जायें और शूगर केन पालिसी के बारे में कोई निश्चित नीति अपनायें। पंजाब, उत्तर प्रदेश और बिहार में विशेषतः चीनी का जो रोजगार है, वह खतरे में है। जिस समय हमारे जिले में शूगर फैक्ट्री लगी थी तो हां साढ़े दस परसेंट और ग्यारह परसेंट रिकवरी होती थी। आज रिकवरी वहां पौने दस परसेंट और साढ़े नौ परसेंट ही रह गई है। इसका क्या कारण है? इसका एक कारण यह भी है कि हमारे यहां कोई अच्छा सीड फार्म नहीं है। सेंट्रल गवर्नमेंट की हालत को देखें कि एक सीड फार्म उसने कोइम्बटूर में खोल रखा है। मुझे कोई एतराज नहीं है कि वहां क्यों खोल रखा है। लेकिन नार्दर्न इंडिया में भी आप का कोई सेंट्रल सीड फार्म होना चाहिये। इधर एक भी नहीं है। स्टेट गवर्नमेंट का है। लेकिन उसके पास इतना पैसा नहीं होता है। हमारे यहां एक पूसा फार्म था जिस को हटा कर आप दिल्ली ले आये। अगर दूसरे सूबे में वह होता तो हम देखते कि किस तरह से उस को आप हटाते। कलकत्ता की लाइब्रेरी आप दिल्ली नहीं ला सकते हैं। बिहार गरीब सूबा है। वहां से उसको हटा कर आप ने दिल्ली में ला कर रख दिया है।

उत्तर प्रदेश, बिहार में जो शूगर इंडस्ट्री पर खतरा है, शूगर इंडस्ट्री, ग्रोअर्स सरकार और स्टेट गवर्नमेंट को बैठ करके इसकी जांच पड़ताल करनी चाहिये और कोई निश्चित कदम उठाना चाहिये ताकि गन्ने की पैदावार बढ़े और शूगर की जो रिकवरी है, वह अधिक हो।

13.10 hrs.

[MR. DEPUTY SPEAKER *in the Chair.*]

मैं एक आध मिनट में यह कहना चाहता हूं कि जो किसान है उस के लैंड रिफार्म की बात चल रही है। हमारे बिहार में सरकार ने जमींदारी को हटा दिया, उसने लैंड की सीलिंग लगाई, लेकिन आज तक उस के सम्बन्ध में कोई निश्चित फैसला नहीं हो सका। नतीजा यह हुआ है कि बहुत सी जमीन झगड़े में पड़ी हुई है। न किसान उन के पास जाता है और न जो पहले जमींदार था वही जाता है। फल यह हो रहा है कि आप की पैदावार काफी कम हो रही है। इसलिये मैं

चाहता हूं कि लैंड रिफार्म के सम्बन्ध में आप कोई उचित कदम उठाय ताकि वह जल्दी से जल्दी हो जायें । अगर आप लैंड रिफार्म को जल्दी से नहीं करेंगे तो किसानों का बहुत घाटा होगा और आप की पैदावार घटती जायेगी ।

मध्य प्रदेश में एक अन्न होता है जिस को खेसारी कहते हैं । उसे गरीब लोग खाते है और मवेशियों को खिलाने के काम में भी वह आता है । सुनते हैं कि वह मध्य प्रदेश से केरल को जाता है । पता नहीं उस के बारे में लोगों ने क्या क्या बतला दिया है । जिस तरह से कभी कहा जाता है कि तम्बाकू खाने से टी० बी० हो जाता है कभी कहा जाता है कि नहीं होता है, उसी तरह से खेसारी के सम्बन्ध में केरल में कहा जाता है कि उस के खाने से गठिया हो जायेगा जिस को अंग्रेजी में गाउट या रयूमेडिज्म कहते हैं । मैं चाहता हूं कि जो पैदावार हमारे किसान लोग करते हैं उस का पूरी तौर से ध्यान रक्खा जाये, खास तौर से मध्य प्रदेश के किसानों की पैदावार का । सब जगह के किसान मेरे लिये एक जैसे हैं । मद्रास में तंजोर का चावल अच्छा समझा जाता है । लेकिन तंजोर का चावल बम्बई, मद्रास, कलकत्ता के सेठ साहूकार खाते हैं । उस को खाने के लिये उन को ज्यादा पैसा देना चाहिये । इसलिये उस चावल का कुछ ज्यादा पैसा निश्चित किया जाय ताकि वे जो पैसा दें वह किसानों के काम आ सके । अगर उस की कम कीमत लगाई जाती है तो किसान मारा जाता है । यह चीज ठीक नहीं है क्योंकि इस से एक कंट्रैडिक्शन पैदा हो जायेगा और कंट्रैडिक्शन का नतीजा यह होगा कि देश को उस की जिम्मेदारी उठानी पड़ जायेगी ।

अन्त में मैं यह कहना चाहता हूं कि आज देश में जलावन का बहुत बड़ा सवाल पैदा हो गया है । चूंकि जंगल कटते चले जाते है इसलिये गांवों में जलावन का कोई जरिया नहीं है । नतीजा यह होता है कि जो लोग मवेशी पालते है वे केवल जलावन के लिये उनको पालते हैं । मवेशियों के गोबर को खेती के काम में लाने के बजाय लोग उस को जलावन के काम में लाते हैं । इस की जिम्मेदारी सरकार को लेनी चाहिये और सरकार हर एक गांव में से ले कर पांच तक जिम्मेदार अधिकारी रक्खे जिस में कि जलावन के पैदा करने का इन्तजाम हो सके । जो बड़े बड़े धनी लोग ह जिन के पास ज्यादा जमीन है वे तो अपना इन्तजाम कर लेते है, लेकिन एक एकड़, दो एकड़ जमीन वाले जो खेतिहर मजदूर हैं उन को जलावन नहीं मिलता है । वे एक वक्त खाना बनाते हैं और दो या तीन वक्त उसी को खाते हैं । में आप को सही बतलाता हूं । हमारे यहां यह होता है कि किसान सत्त नामक पदार्थ को खाता है । वे एक वक्त उस को बना लेते हैं और दो या तीन वक्त खाते ह जलावन की कमी की वजह से । मैं चाहता हूं कि सरकार कोई ऐसा इन्तजाम करे कि गांवों के जलावन का जो प्रश्न है वह हल हो । में अपील करूंगा कि इस प्रश्न को सरकार जल्दी से जल्दी अपने हाथ में ले ।

Shri S. S. More (Poona): Mr. Deputy-Speaker, I want to make a few observations about some essential aspects of the sugar industry. I shall undoubtedly be critical of the administration, but this does not mean that I am entirely dissatisfied with what the department has been doing. I am proud that Maharashtra has supplied a Minister for the Centre with abundant dash and drive and a capacity to organise. He has achieved wonderful success where many men failed. My first submission regarding the sugar industry will be that the sugar industry is fast reaching a crisis of under-production. My friend Shri Bibhuti Mishra gave certain figures about the shortfalls that are expected. I will also give some figures.

The production of the current season, according to me, will be not more than 23 lakh tons. Of course,

[Shri S. S. More]

it is Government's very optimistic estimate that they will produce 32 lakh tons.

The Minister of Food and Agriculture (Shri S. K. Patil): That is next year after that.

Shri S. S. More: The carried over stocks of the last year are to the tune of 10 lakh tons. So, the total sugar available will be 33 lakh tons. We require sugar for two purposes: for internal consumption, for export. As far as internal consumption is concerned, the Tariff Board has already stated that the consumption of sugar in the country is rising very fast. Taking that basis for our consumption, I believe that the requirement will be more than 25 lakh tons. In 1950, we consumed 10 lakh tons. In 1960, we consumed 20 lakh tons. The Tariff Commission has given the figure that for 1958-59, the total consumption of sugar, according to the Traiff Commission, was 2.10 million tons. On a very modest estimate the consumption in 1962 is bound to be more than 25 lakh tons. In addition of sugar required for consumption, the sugar that we required for export is to the tune of about 5 lakh tons. With 25 lakh tons for consumption and 5 lakh tons for export, the figure comes to 30 lakh tons. Production plus carried over stocks will be 33 lakh tons. So, there will be a margin of 3 lakh tons. In a country where the population is something like 45 crores, such a margin is hardly sufficient. If for some reason or other marriages or some other reason, consumption of sugar goes up, we shall be facing undoubtedly a crisis of under-production and prices of sugar are bound to shoot up.

My further submisson will be that there has been absence of proper planning as far as production of sugar is concerned. We are taking about planning every day in season and out of season. But, as far as the sugar industry is concerned, it has suffered from non-planning by the Government. Take, for instance, last year. Government came down with controlling rigour that 10 per cent of the production of sugar ought to be reduced. Instead of anticipating a crisis of under-production, they anticipated a crisis of surplus production and in their own panic, they placed a ban that 10 per cent of sugar production should be reduced. This order was issued so late that it caused the greatest inconvenience and even monetary loss to many agriculturists. Therefore, I submit that the department has not fared well as far as sugar is concerned.

I may be stating almost an elementary truth when I say that if sugarcane production is to go up and all the factories that are multiplying in the country are to receive tht raw material, the sugarcane grower must be assured a remunerative price. But, this is hardly done and that is why the peasants who grow sugarcane in the North, in the U. P. and other States are always perpetually in fight against the factory owners. As far as Maharashtra is concerned, I am very proud to state that we have 20 factories and out of these 20, seven have already gone into production. The relationship between the factory owners or managers of the factories and the peasants who grow the sugarcane are the happiest. If we have to see economic democracy working in perfect sympathy and perfect order, we have to watch the working of the co-operative factories in Maharashtra. Not only are they trying to see that the agriculturist is benefited or the peasant is benefited, but the managemnet is efficient, and the actual cultivators of sugarcane are working in co-operation with the managers of the factories, with the result that the labour employed, the sugarcane growers and the factory managers are a happy family. Therefore, the yield of sugar is the highest in Maharashtra. Therefore, the percentage of extraction from a ton of sugarcane is also the highest in Maharashtra.

Now, Government are trying to lump together the sugarcane-growers of Maharastra and other southern

parts where decidedly the sugarcane industry and the production of sugar are in a very healthy and vigorous condition with the sugarcane growers and the sugarcane industry in the north. The result will be that the efficient units will have to drag on or carry the non-efficient units, and both will suffer.

As far as the administration of the Agriculture Department is concerned, it has been highly unsatisfactory. The export of sugar—leave aside consumption for the moment—is entrusted not to the STC, as we should ordinarily expect, but it has been entrusted to the Indian Sugar Mills Association. It is a private association or a private institution; though some representation is given to the sugarcane growers or factory managers on this institution, none-the-less it does not cease to be a private association. I wonder why when the STC is there this export business should not be entrusted to the STC. We have provided something like Rs. 13½ crores to finance the loss which this association may incur in exporting. The amount was practically handed over to them, and it was not submitted to the PAC, nor was it placed before the House. This unscrutinised business without any proper scrutiny is likely to create all sorts of troubles. Therefore, my submission is this. Why not form an association of the co-operative units who have been doing all this business in a very efficient manner and entrust this export to them?

Then, there is one more thing about which I have to lodge a strong protest. Even in this export business, inefficiently producing units and the efficiently producing units are again lumped together. In Poona, there are so many factories. If we have to export sugar, the practical realities of efficient business would dictate that factories nearest to the port should be asked to send their products for export. But, no, they take some sugar from UP and other distant places and carry it over to the Bombay port or the Calcutta port without minding the freight charges. And it is natural that they do not mind the freight charges because all freight charges are lumped together. If sugar from Poona is to be taken to Bombay, if the freight charge for that is one rupee, then the freight charge for taking sugar from some of the towns of UP to Bombay, may be five rupees. They lump together one rupee and five rupees and distribute it over the whole export. My submission is that this is penalising the more efficient units which have been producing sugar at a lesser cost.

The Tariff Commission have also stated:

> "Our examination of manufacturing costs has revealed that costs vary from region to region according to the duration and recovery. Duration and recovery may also vary from year to year in the same region. As a result, it is not possible to fix a uniform fair price payable to the industry applicable to all regions for any length of time.".

The Ministers in charge of agriculture are contemplating to evolve certain uniform standards. They are trying to fix a uniform price for all the sugar that is produced in the country. My plea is that if Maharashtra sugar is produced at a lesser cost, that fact should be taken into consideration, and the sugarcane growers or the sugar producers in Maharashtra should get better prices. If the efforts to produce at lesser cost are to be encouraged..

Shri K. N. Tiwary (Bagaha): At what price is the Maharashtra sugar sold in the market?

Shri S. S. More: Unfortunately, I do not know all these things. My submission is that I am relying on the Tariff Commission's report. If my hon. friend looks into the Tariff Commission's report, he will get all those facts there.

Shri K. N. Tiwary: I think that the price of Maharashtra sugar is the same as that of Bihar, UP and Punjab.

Shri S. S. More: This is not the question hour, I am being heckled

[Shri S. S. More]

with questions and supplementary questions. My submission is that I speak on the authority of the Tariff Commission's report. They themselves have stated that there are different regions, regions of efficient production and regions of non-efficient production. If the non-efficient regions are tried to be measured by the same yard-stick by which the efficient units are to be measured, then it will be undoubtedly unfair to the efficient regions.

Government have decided, I am told, to appoint a sugar board. Why should they appoint a sugar board? I think that they propose to appoint the sugar board for the purpose of developing a certain uniform price and other standards. I dislike that sort of uniformity, because it is prejudicial to the more efficient producers, and it should not be undertaken by Government.

For all these reasons, I say that Government should take notice of all the points that I have made. I want to tell them that the sugar industry in Maharashtra is a very tender plant and very sensitive too and has to be handled very carefully. If we are to be self-sufficient in sugar, not only for the purpose of internal consumption but even for export, then it is highly necessary that those who are efficient and who are producing at a lesser cost should be encouraged to produce more and thus supply the needs of the country.

Shri P. R. Patel: Is it because of the climatic condition of Maharashtra?

Shri S. S. More: Whatever may be the reason, this is a factor which should be taken into account. My hon. friend Shri P. R. Patel can find that out from the Tariff Commission's report or other relevant reports.

Shri Sonavane (Pandharpur): We invite Shri P. R. Patel to Maharashtra.

Shri S. S. More: I may say, Sir, that I am not speaking for Maharashtra only; all the southern regions are in the same category, Maharashtra, Mysore, Andhra Pradesh and Madras are more efficient producers of sugar and they produce it at lesser cost. But we have to carry this north Indian load on our shoulders.

Shri Inder J. Malhotra (Jammu and Kashmir): At the very beginning, for once, I would like to congratulate the Ministry of Food and Agriculture for at least maintaining the balance of their mind during the emergency period. It is very true that the hon. Minister has confidently said that especially during the emergency there would be no food problem in the country. I quite visualise that when he makes that statement, he depends not only more but at least bases his observation on the food imports, the guaranteed food imports from the U.S.A. How far and for how long can we live under such conditions of food imports?

No doubt, the Ministry has made a good beginning as far as increasing the cultivation of cash crops, especially vegetable crops, is concerned. I was very happy to know that in the border areas of NEFA and also in Ladakh, extensive and intensive cultivation of vegetables has been taken up. I would very strongly plead with the more and other border areas also should be brought under this scheme.

From time to time, the question always comes up whether India can ever become self-sufficient in agricultural production. Looking to the past and taking into consideration present conditions, I do not see any hope in the near future of India becoming self-sufficient in our food requirements. If it is so, I would appeal to the hon. Minister to be bold enough and let the country know the exact position prevailing in the agricultural sector.

From time to time, we have criticised all kinds of agricultural schemes and agricultural development programmes undertaken either by the Central Ministry or by State Governments. I would refer to a very con-

troversial point regarding the implementation of agricultural schemes. There are quite a large number of schemes initiated by the Central Ministry of Food and Agriculture. But ultimately the implementation is the responsibility of State Governments. Whenever questions are asked in this House as to what progress has been made in a particular scheme initiated by the Ministry here, and asked why a certain scheme is not working properly or not being properly implemented,—the responsibility is shifted to the State Governments. The answer is always given that the responsibility of implementation is with State Governments. I would ask only one question here: if agriculture has to remain the main responsibility of States, what is the use of having such a large paraphernalia at the Centre? Under these circumstances, I would suggest that the Central Ministry of Food and Agriculture may look mainly to the co-ordination of research programmes and let State Governments be made more independent so that ultimately they may be taken to task if they fail to implement the schemes and there is less increase in agricultural production as a whole when the potential is there.

Another work which mainly the Central Ministry can do is the co-ordination of all kinds of resources, sources of supply, of materials and scientific knowledge, being made available to the farmer. It is my experience that at the lower levels especially, in spite of the fact that so many times the central Ministers say that there is complete co-ordination, there is absolute lack of co-ordination between the different agencies working in the field of agriculture. I would draw the attention to the agencies of BDO and district agriculture officers. The poor farmer is made to run from one office to another for one kind of permit to get fertilisers, for another kind of permit to get improved seeds and so on. And he gets so fed up with this confusion prevailing at the lower levels that ultimately he gives up his efforts to procure fertilisers and improved seeds at the block offices. Thus the programme suffers.

Regarding the past performance of the Ministry, apart from other things, I would refer to the report of the Public Accounts Committee laid on the Table only a few days back, specially the item referring to the World Agriculture Fair held in New Delhi. This Fair was organised under an organisation named Bharat Krishak Samaj. From the report, I find that this is absolutely a private organisation. Certain charges and very serious allegations have been made against the financial transactions undertaken for the organisation of this World Agriculture Fair. I would only read a small paragraph, concluding paragraph, from the report of the Committee. It says:

> "The Committee desire that the entire question of the financial transactions with the World Agriculture Fair should be looked into by Government as it involves important principles which are of vital interest to the proper working of the Government. It would be advisable for the Government to lay down certain broad and healthy conventions and formalities to be observed by persons holding high official positions when they are either participants or patrons of non-official organisations which have any financial dealings with the Government. The Committee would also like to be informed about the recovery of government dues from the Bharat Krishak Samaj".

It is a well-known fact that the President of the Bharat Krishak Samaj was also a few years ago the Minister of Agriculture. In fact, at the World Agriculture Fair was held, the official and non-official authority for the organisation of the Fair vested in the same person. Whatever irregularities have been committed, specially the financial ones, I would very strongly plead in the name of farmers that when such organisations come up and when public funds are involved,

[Shri Inder J. Malhotra]

it is the responsibility of Government to see that these organisations function properly. Government should see that the farmers instead of losing confidence in such organisations should have enhanced confidence in these organisations of farmers.

At the same time, the President of the Bharat Krishak Samaj has denied all the allegations and observations brought out in the PAC report. He has also said that on the other hand, Government owe something to the Samaj. I would appeal to the hon. Minister to clarify the matter and give us all the facts. (*An Hon. Member: Appoint a committee.*) We should know what is the real position and where the real irregularities lie. All the profits made from the Fair are now the financial assets of the Samaj. Apart from this, there are subscriptions also given by farmers from all over the country. Rather it is the only organisation of this nature in the country. So it is important that effective steps must be taken and efforts made to see that if there is something wrong in the working of this organisation, it is set right.

We often plead with the Ministry that whatever good things have been evolved at the various research stations in the country should not be shelved but made available to the farmers. In that process, the Agricultural Extension Service has to play a very important role. Again, my difficulty is that on the one hand, the Central Ministry has got a Directorate of Agricultural Extension Service. In practice, we see that the main work of community development, especially of the BDO, is the work of agricultural extension. What is the real relationship existing between the Directorate of Extension and the extension agencies of the Community Development Ministry which I mentioned?

One way of disseminating scientific knowledge to the farmers is the personal touch or the personal relationship between the extension worker and the farmer; another is producing simple, clear and informative agricultural literature for distribution among the farmers. Some of the bulletins brought out by the Ministry's Extension Service are quite good, but my complaint is that most of the time they are in English. I would say that the production of agricultural literature should be more in Hindi and the regional languages, so that the farmer can very easily understand how to improve his production.

For the last three or four years I have been emphasizing in this House the need for appointing an Agricultural Commission to find out why during the last 15 years we have not been able to achieve the targets set before us, where the real difficulty or bottleneck lies in this programme. The hon. Minister always replies that such a commission would take years to complete its surveys and observations, and so it is not proper to have such a commission, but good recommendations can only come after a thorough enquiry is made into all aspects of agriculture.

But there is one aspect which is absolutely clear to us, that the agricultural administration needs to be reorganised at all levels, at the District, State and Central levels. It is not very difficult to think about the lines on which we can reorganise our whole agricultural administration based on the reports submitted by the committees or other Government agencies which have gone into this question of the reorganisation of the agricultural administration. Unless and until complete co-ordination is built up, especially at the lower levels which I mentioned a few minutes ago, it will be very difficult for the farmer to derive the benefit that we intend from whatever money, material or scientific knowledge that we put out.

In the end, I would like to make a brief reference to Jammu and Kashmir State. In that State fruit cultiva-

tion is the main cash crop from which the majority of the population derives its income. Last year about Rs. 8 crores worth of fruit was exported from the State, and quite a good deal of foreign exchange was also earned. Keeping in view the fact that all kinds of fruits are grown in the State, I would appeal to the Central Ministry to launch more research schemes to improve this activity in the State.

श्री यु० सिं० चौधरी (महेन्द्रगढ़) : आदरणीय उपाध्यक्ष महोदय, इस डीबेट के बारे में सब से खुशी की बात यह है कि इस मिनिस्ट्री की डिमांडज पर सवेरे से जितने भी माननीय सदस्य बोले हैं, चाहे वे इस तरफ़ के हों और चाहे उस तरफ़ के, उन सब के विचार प्रायः बहुत सारी बातों के बारे में एक हैं ।

एक माननीय सदस्य : सिवाय को-आपरेटिव फ़ार्मिंग के ।

श्री यु० सिं० चौधरी : चाहे कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य हों और चाहे स्वतंत्र पार्टी और कांग्रेस पार्टी के, उन सब ने जो बातें कहीं हैं, उन में कोई लम्बा-चौड़ा मतभेद नहीं दिखाई देता है ।

इस में कोई शक नहीं है कि हमारे देश की अर्थ-व्यवस्था कृषि पर निर्भर करती है । कम से कम ऐसे देश में, जहां की अस्सी प्रतिशत जनता खेती के द्वारा अपना जीवन-निर्वाह करती हो, कृषि का उत्पादन बढ़ना, उस देश की सारी की सारी अर्थ-व्यवस्था का एक उत्तम आधार है । पिछले पंद्रह सोलह सालों से खेती के उत्पादन को बढ़ाने के लिए हम ने एक नहीं, अनेक नीतियों का प्रयोग किया है । वे नीतियां हर साल, या एक दो साल के बाद, अनेक रूपों में बदलीं, लेकिन इन सारी बातों के बावजूद आज भी प्रत्येक मेम्बर इस बात को कह रहा है कि फूड प्राडक्शन के बारे में हमारा जो निश्चित टारगेट था, जो निश्चित सीमा थी, वहां तक हम नहीं पहुंच सके हैं, खेती के उत्पादन के बारे में हमारी जितनी आवश्यकता थी, उस को हम पूरा नहीं कर सके हैं, विदेशों से जितना अनाज पहले मंगाया जाता है, अब भी उतना ही अनाज आ रहा है और इस प्रकार पंद्रह सोलह सालों के बाद भी यह समस्या वैसी की वैसी है । जब कि और क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ा है और स्थिति पहले से अधिक उत्तम है, लेकिन खेती और अन्नोत्पादन के मामले में, जिस पर कि इस देश की अर्थ-व्यवस्था निर्भर है, स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है । देश की अर्थ-व्यवस्था में इस के क्या घातक और भयावह परिणाम हो रहे हैं, जब हम इस की कल्पना करते हैं, तो सारी स्थिति स्पष्ट हो जाती है ।

इस के कई कारण हैं । अलग अलग माननीय सदस्यों ने अगल अलग कारण बताए हैं । मेरी समझ में इस का सब से बड़ा कारण यह है कि इस सम्बन्ध में सरकार ने जो भी नितियां निर्धारित कीं, वे व्यवहारिक होने की अपेक्षा अधिक थ्योरेटिकल और अव्यावहारिक हैं । उदाहरण के तौर पर हमारे सामने यह प्रश्न पैदा होता है कि पुराने ढंग की खेती को हटाने और उस के स्थान पर नये ढंग की खेती करने के लिए मशीनरी इन्ट्रोड्यूस करनी पड़ेगी, किसानों को अच्छे बीज देने पड़ेंगे, ताकि किसान हजारों सालों से अपनाये गये तरीकों को बदल कर नये तरीकों को अपनायें और नये तरीकों के प्रति उनमें उत्साह हो । इस स्कीम के अलग पहलू और विभाग हमारे सामने हैं । एग्रीकल्चरल कालेज, वेटिरीनरी कालेज, ब्लाक डेवेलपमेंट का महकमा और इरिगेशन का महकमा, इन सब विभागों ने इस सम्बन्ध में काम करना है । नहरों का पानी खेतों में जाए । एग्रीकल्चर डिपार्टमेंट का आफिसर नये तरीके बताए । ब्लाक डेवेलपमेंट के महकमे से ग्राम सेवक किसानों को खाद दे, ताकि नये तरीके काम में लाने से किसान के खेत की पैदावार पहले से कहीं अधिक हो सके ।

इस बारे में अगर मैं यह कहूं कि

[श्री यू० सिं० चौधरी]

हमें सरकार की नीयत पर शक है, तो शायद यह अच्छा न लगे। हम देखते हैं कि इस सम्बन्ध में बहुत से आफ़िसर्ज और आदमी नियुक्त किये गए हैं, लेकिन पंद्रह सोलह साल पहले जो स्थिति थी, वह और भी ख़राब हो गई है और हम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ रहे हैं। इस का कारण यह है कि जिन आफ़िसर्ज वगैरह को हम ने रखा है, उन की एजूकेशन, उन की शिक्षा, थ्योरेटिकल और किताबी ढंग की है और वह पुस्तकों पर आधारित हैं। इस लिए वे लोग गांवों की प्रैक्टिकल, व्यावहारिक, बातों को, जिन का सीधा सम्बन्ध खेत और मिट्टी से है, नहीं समझ पाते हैं। एक आदमी एग्रीकलचर में बी० एस० सी० करना चाहता है या बी० बी० सी० करना चाहता है तो उसको पांच छः साल लगाने पड़ते हैं, उसके बाद जा कर उसको डिग्री मिलती है। जब वह डिग्री ले कर आता है, गांव में पहुंचता है उस वक्त जो कालेज का वातावरण होता है, जो लैबोरेटरी का वातारण होता है, जो पुस्तकीय ज्ञान होता है, वही उसके दिमाग़ के सामने रहता है, इन के अलावा जो प्रेक्टीकल बातें हैं, उनका उसको ज्ञान नहीं होता है। मैं मानता हूं कि पुस्तकों का ज्ञान भी आवश्यक है। लेकिन प्रेक्टिकल ज्ञान उस से भी ज्यादा आवश्यक होता है। जब वह गांव में आता है तो वहां की जो हालत होती है, वहां का जो वातावरण होता है, उसको देख कर वह घबरा उठता है। मैं आपके सामने एक उदाहरण रखना चाहता हूं। हमारे यहां एक हिसार जिला है। वहां पर बहुत अच्छी नस्ल की गाएं होती हैं। वहां पर पंजाब का वेटरनिरी कालेज है। काफी प्रसिद्ध वह कालेज है। सैंट्रल गवर्नमेंट ने उस के लिए पचास साठ लाख रुपये की सहायता भी प्रदान की है। कुछ दिन पहले शिकायत आई थी कि पास के गांव में जो राजस्थान में है, ऊंटों के अन्दर कोई बीमारी फैल गई है। वहां पर उस कालेज में एक्सपर्ट प्रोफ़ेसर हैं। उन लोगों ने एक टीम वहां उस गांव में भेजी जो जा कर ऊंटों की उस बीमारी को दूर कर सके। उस टीम ने वहां जा कर जिन जिन ऊंटों को इंजैक्शन किया वे सारे के सारे मर गए। इस सब का कारण क्या है? इसका कारण यह है कि उनको थ्योरेटीकल नालेज तो होता है लेकिन प्रेक्टीकल नालेज नहीं होता है। जिस वातावरण में वे कालेजों में रह रहे होते हैं, वह वातारण गांवों की जो पुरानी बातें होती हैं, उससे इतना परे होता है कि वे इन पुरानी बातों को समझ ही नहीं सकते हैं। अमरीका में भी जो एक हूवर कमिशन बना था, उस ने आज से तीस चालीस साल पहले एक रिपोर्ट दी और उस में उसने कहा था कि जो आदमी एग्रिकलचर कालेज के अन्दर एडमिशन लेने के लिये आते हैं या वैटरनिरी कालेज में एडमिशन लेने आते हैं या ऐसे कालेजों में लेने के लिये आते हैं जिन का सीधा संबंध खेती बाड़ी के साथ हो, उनको कम से कम पच्चीस परसेंट हिस्सा सारी की सारी ट्रेनिंग का, प्रेक्टिकल ट्रेनिंग में गुज़ारना चाहिये। उनको यह हिस्सा देहातों के अन्दर बिताना चाहिये ताकि उनको देहातों की सभी बातों का ज्ञान हो सके, सही हालत की जानकारी वे अच्छी तरह से प्राप्त कर सकें। इस तरह की ट्रेनिंग थ्योरेटिकल ट्रेनिंग के साथ जब मिल जाएगी तो कितने अच्छे युवक कालेजों में से निकल सकते हैं, इसका अनुमान आप भी आसानी से लगा सकते हैं।

जब इस तरह की बात होती हैं तो इनके घातक परिणाम निकलते हैं। कितने ही महकमे आपने खोल रखे हैं। ब्लाक डिवेपमेंट का एक महकमा है, एग्रीकलचर इंस्पेक्टर भी आप ने रख दिए हैं, जब खाद की उनको ज़रूरत होती है तो उनको किसी दूसरे ही डिपार्टमेंट के पास जाना पड़ता है और ये सारे जो झंझट हैं, इनके प्रति उनके दिलों में एक नफरत सी पैदा हो गई है।

हमारे कम्यूनिस्ट भाई ने खेती में जो कठिनाइयां होती हैं, समस्यायें उत्पन्न होती हैं, उनका जिक्र किया है । जहां तक पंजाब का संबंध है हमारे यहां मध्यम वर्गीय किसान हैं, खेती की हालत शेष भारत से अच्छी है नहरें हैं, जमीन अच्छी है और लोग कुछ अधिक ही पैदा करते हैं, बाकी देश के मुकाबले में, वहां आप किसी गांव में जायें, किसी भी गांव वाले से पूछें कि यह जो डिवेलेपमेंट का महकमा है या बहुत सी बातें जो नई चली हैं, इनके बारे में तुम्हारा क्या खयाल है, तो प्रत्येक देहाती बड़े जोरदार शब्दों में कहेगा कि ये जितने महकमे हैं, ये सब के सब प्रपंच हैं, कोई काम करने के लिये तैयार नहीं है, खाद लेते हैं तो वह इतनी बुरी होती है कि कोई लाभ ही नहीं होता है, खाद इस्तेमाल करने का तरीका हमें मालूम ही नहीं है । जो लोग गांवों में आते हैं वे काम में इंटिरेस्ट नहीं लेते हैं और न ही गांव में टिकते हैं । पतलून पहनकर सुबह आते हैं और शाम को पांच बजे की बस से तहसील या डिस्ट्रिक्ट हैडक्वार्टर में चले जाते हैं, या ब्लाक हैडक्वार्टर में चले जाते हैं । वहीं से सारी की सारी इंस्ट्रक्शंज ग्राम सेवक को दे दी जाती हैं । कागजों का पुलंदा बना करके जो चीजें हैं, वे जिले के डिवेलेपमेंट आफिसर के पास पहुंच जाती हैं और कागजी कार्रवाई के सिवा और कोई काम नहीं होता है । कागजी कार्रवाई का पुलंदा तो बहुत ऊंचा हो जाता है और घूम फिर कर राजधानी में पहुंच जाता है, लेकिन असल में कुछ भी काम नहीं होता है और जो समस्या है वह ज्यों की त्यों बनी रहती है । अनाज का उत्पादन नहीं बढ़ता है । पंद्रह बीस साल पहले जहां हम थे, वहीं आज भी विद्यमान हैं। मैं चाहता हूं कि इस समस्या पर आप गहराई से विचार करें ।

जितने भी माननीय सदस्यों के इस मिनिस्ट्री की डिमांड्ज पर भाषण हुए हैं उन सभी ने सामान्य रूप से एक बात कही है । उन्होंने कोआर्डिनेशन का जिक्र किया है । यहां पर दो तीन मिनिस्टरीज हैं । एक तो एग्रिकलचर मिनिस्ट्री है, दूसरी डिवेलेपमेंट एंड पंचायत राज मिनिस्टरी है और तीसरी इरिगेशन मिनिस्टरी है । यह मंत्रालयों का जो जाल है, मंत्रियों का जो जाल है, इसने इतना कनफ्यूज़न पैदा कर दिया है कि जिस का कोई ठिकाना ही नहीं । किसान के सामने तो इन सब को एक ही रूप में उपस्थित होना चाहिये । लेकिन ऐसा नहीं होता है । खाद के लिये उसको एक के पास जाना पड़ता है , बीज के लिए दूसरे के पास जाना पडपा है, नहर का पानी चाहिये तो उसके लिये उसको तीसरे आदमी के पास जाना पड़ता है और अगर किसी और चीज की उनको आवश्यकता हो तो उसको चौथे आदमी के पास जाना पड़ता है । यह जो अपने आदमियों को खपाने की प्रवृत्ति है, दो तीन मंत्रालय है, तीन चार मंत्री बना दिए हैं, उसमें किसानों का कोई हित तो हो ही नहीं रहा है, उल्टे नुकसान जरूर हो रहा है । कोई बात अच्छी होने के बावजूद भी किसान के लिये लाभप्रद सिद्ध नहीं हो रही है । इसका कारण यह है कि अलग अलग मिनिस्ट्रियों का चक्कर है । किसान चाहता है कि वह इस मुसीबत से परे रहे, इस बला से परे रहे और वह किसी के पास न जा कर अपने पुराने तरीके पर ही, अपने पुराने ढर्रे पर ही अमल करता है । हर एक बात में आप उसी को आवार मान कर चलते हैं, लेकिन उसका भला नहीं होता है । यह उसके बस की बात नहीं है कि तीन चार रूपया खर्च करके वह एग्रिकल्चर आफिसर के पास जाए । एक आदमी अगर डिस्ट्रिक्ट हैडक्वार्टर में है तो दूसरा तहसील हैडक्वार्टर में है । अब वह चक्कर लगाता नहीं फिर सकता है । इसका नतीजा यह होता है कि वह समझने लग जाता है कि जिस हालत में वह है उसी हालत में अच्छा है और उसको किसी झंझट में नहीं पड़ना चाहिये । क्या सरकार कोई ऐसा हल नहीं निकाल सकती है कि ये जो इतने मंत्रालय हैं इन में कम से कम कोआर्डिनेशन तो हो, तालमेल तो हो और किसान

[श्री यू० सि० चौधरी]

को अगर किसी चीज की जरूरत हो तो उसकी पूर्ति के लिए उसे एक ही अदनी के पास जाना पड़े । जब उसको पानी की जरूरत होती है तो उसको एक आदमी दिखाई पड़ता है और जब बीज की जरूरत होती है तो दूसरा दिखाई पड़ता है और तीसरी चीज की जरूरत होती है तो तीसरा ही दिखाई पड़ता है और उसका कोई अन्त ही नहीं है । अगर उसको शिकायत होती है तो अलग अलग शिकायतों के लिए उसको अलग अलग मिनिस्ट्रियां को लिखना पड़ता है । जब तक किसान के सामने एक आदमी इन सब चीजों की पूर्ति के लिए नहीं होता है और जब तक यह सारा भ्रम, यह सारा जाल यह सारा कनफ्यूजन जारी रहता है तब तक चाहे जितनी स्कीमें आप बना ब दिल्ली में बैठ कर कुछ भी सोच लें, कितनी ही बात कर लें, कोई लाभ नहीं होने वाला है । जब तक जो अफसर हैं, जो मशीनरी है, जो एजंसियां हैं, उनका यह ठीक रूप में प्रयोग नहीं करता है, तब तक कुछ नहीं हो सकता है ।

ग्राम सवकों के बारे में अनेक बातें कही गई हैं । जहां तक ग्राम सेवक रखने का उद्देश्य है वह प्रसंशनीय है । उनके द्वारा बहुत अच्छा काम भी हो सकता है और अच्छी बातें हुई भी हैं, भलाई के काम हुए भी हैं । जहां जहां अच्छे अच्छे ग्राम सेवक गए वहां वहां अच्छी चीजें दरअसल में हुई हैं । लेकिन उनकी तादाद एक दो प्रतिशत से अधिक नहीं है । ये कार्य कई प्रकार के चक्करों में रहते हैं, कभी बी० डी० ओ० इन से एक्सप्लेनेशन मांग लेता है कि कितना उन्होंने ब्लाक के खेतों में काम किया, मीटिंग में कहता है, कितना सीड तक्सीम किया है, कितने इंजैक्शन जानवरों के लगाये हैं, कितनी गलियां साफ करवाई हैं । इसका नतीजा यह होता है कि वे झूठा सच्चा चिट्ठा तैयार कर देते हैं और उसको उठा कर पंचायत में सुना देते हैं । इस तरह से आप देखें तो गांव में कुछ काम नहीं हो रहा है । वही कच्चा चिट्ठा राजधानी में पहुंच जाता है और पुस्तक की शक्ल में छप कर सामने आ जाता है । दरअसल में कुछ नहीं हो रहा होता है । इन सब कामों को प्रेक्टीकल शेप देने के लिए यह जरूरी है कि हम व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनायें और गम्भीरतापूर्वक सोचें कि ऐसे व्यक्तियों को लगाने की अपेक्षा जो केवल किताबी नालेज के आधार पर सारी की सारी समस्या को सुलझाना चाहते हैं, ऐसे व्यक्तियों को रखें जिन को प्रेक्टिकल नालेज भी हो । किताबी ज्ञान जरूरी है इसको मैं मानता हूं । लेकिन उसी के आधार पर जो समस्यायें हैं, वे सुलझ नहीं सकती हैं ।

आप देखें कि अभी पिछले दिनों पंजाब में बड़े भारी फ्लड आये थे । उनका क्या कारण है ? उन से सड़कें टूट गयीं, नहरें टूट गईं और मजेदार बात यह है कि पंजाब में इस बार अकाल की स्थिति है, बरसात नहीं हुई है, सर्दियों में भी बारिश नहीं हुई है । फिर भी वहां फ्लड आ गये ? वहां से यह पानी आ गया ? पी० डब्लू० डी० के महकमे ने सड़कें बना दीं, नहर वालों ने नहरें खोद दीं, दूसरे महकमे वालों ने दूसरे काम कर दिये, कंसालिडेशन वालों ने कंसालिडेशन कर दिया । सब ने अलग अलग ढंग से बिना किसी कोआर्डिनेशन के काम कर दिया । जब पानी शिवालक की पहाड़ियों से चलने लगा तो सब से पहले वह आ कर किसी सड़क से टकराया और सड़क को उसने तोड़ा । पी० डब्लू० डी० को पता नहीं था कि पानी भी ऊपर से आ सकता है । अब पानी का काम इरिगेशन डिपार्टमेंट के जिम्मे है । सड़क टूटने के बाद पानी फिर बढ़ा आगे और भाखड़ा की कोई नहर उसको मिल गई, उसने उसके भी तटों को तोड़ दिया और अब वह दुगुना हो गया । वह पानी आगे चला और इस प्रकार उसने रोहतक, सोनीपत इत्यादि में बाढ़ की स्थिति ला खड़ी कर दी और बगैर बारिश के बाढ़ आ गई । किसी आदमी ने यह सोचा ही नहीं कि नीचे कोई

नालियां बनाई जाये, कोई चैनलज बनाई जाय जिससे पानी आगे निकल सके और यह समस्या न उठ सके । इस वास्ते मैं कहना चाहता हूं कि कोओर्डिनेशन बहुत आवश्यक है । इस तरफ आपका सब से पहले ध्यान जाना चाहिये ।

अब मैं टैक्सिस के बारे में कुछ कहना चाहता हूं । इस बार बहुत ज्यादा टैक्स लगाये गये हैं । इसका मैंने जिक्र उस वक्त भी किया था जिस वक्त बजट पर बहस चल रही थी । मैं देहातों में गया हूं और तीन चार दिन वहां रह कर आया हूं । वहां के हालात को मैंने देखा है । मैं अपनी पहली की बात को ही दोहराना चाहता हूं । इतने अधिक टैक्स लगाने का जो आपने एक्सपेरीमैंट किया है मैं चैलेंज के साथ कह सकता हूं कि अगर अगली बार, अगले अप्रैल में भी इतने ही टैक्स और लगा दिये जायें तो आपके सैक्रेटेरिएट के जो सैक्रेटरीज हैं, वे तो जमीन जोत सकते हैं, लेकिन जो किसान हैं, जो जमींदार है, वह खेती नहीं कर सकेगा । वे बहुत बोझे के नीचे दब गये हैं । आपका इतना बड़ा सैक्रेटेरिएट है, उन लोगों को आप बेशक वहां भेज दें वे बेशक खेती पर लग जायें, किसान और जमींदार नहीं करेगा । वे ही वहां जा कर पैदावार करके अन्न की समस्या हल कर सकते हैं, किसान नहीं कर सकेगा । उन के जो हजारों खर्चे हैं उन को आप ने दिमाग में न रख कर केवल अपनी कल्पना के द्वारा जिस चंगुल के अन्दर उन को कसा है वह उन के बस की बात नहीं है कि वह उस अनाज की मांग की पूर्ति कर सकें ।

14 hrs.

श्रीमती लक्ष्मी बाई (विकाराबाद) : उपाध्यक्ष महोदय, मैं कृषि मंत्री को उन के बहादुरी के काम के वास्ते बहुत बधाई देती हूं, परसों वे हमें पूसा इन्स्टिट्यूट में ले गये थे और वहां हमें बतलाया गया कि वहां कितनी अच्छी फसल हो गई । मैं उस को देख कर बहुत खुश हुई । मैं ने मिनिस्टर महोदय को बतलाया कि उन्होंने हमारी धरती को शस्य श्यामला बना दिया । मगर मैं यह सोचती हूं कि अन्धा आखिर क्या चाहता है ? दो आंखें । हम सारे देश को ऐसा ही बनाना चाहते हैं । मैं ने वहां पर पूछा कि इस उपज को करने के लिये एक एकड़ पर खर्च कितना आया । लेकिन कोई अफसर उस को बतलाने के लिये तैयार नहीं था । मतलब यह है कि कोई भी सच नहीं बोलना चाहता । यह तो बतलाया कि एक एकड़ में जितनी उपज होती है उस से पांच गुनी उपज हो गयी, लेकिन उस पर खर्च कितना आया यह नहीं बतलाया ।

अभी हमारे माननीय सदस्य श्री युद्धवीर सिंह चौधरी बोल रहे थे । उन्होंने जो कुछ कहा वह बिल्कुल सही था । उन्होंने कोई एग्जैजरेशन नहीं किया । सब के दिल में वही बात है । मैं मंत्रियों की नहीं, जो कि यहां पर बैठे हैं और जिन की संख्या तीन है, बल्कि अफसरों की जिन की संख्या अधिक है, बतलाना चाहती हूं कि हमारे दिल में क्या दर्द है । वे लोग समझदार है, तजुर्बेकार हैं, वेल एजुकेटेड है । उन को बाहर देशों का भी तजुर्बा है और वे लोग जल्दी मान लेंगे क्योंकि हमारी तकदीर को बदलने का काम उन के हाथ में है, ऐसा मैं महसूस करती हूं । मैं भी एक किसान हूं । मैं चाहती हूं कि जो कुछ मैं कहती हूं उस को हमारे मिनिस्टर साहब सुन लें । मैं अपने तजुर्बे से कहती हूं और उस में किसी को शक नहीं होना चाहिये । मेरे अन्दर कोई शक नहीं है कि मेरी बातों के ऊपर यहां पर शक किया जायेगा ।

मैं इस विभाग को बधाई देना चाहती हूं कि उन को इस साल ८१ करोड़ से ज्यादा के फंड मिल गये है । यह अफसोस की बात है कि पिछले साल से इस साल हमें ज्यादा अनाज मंगाना पड़ रहा है । जितना ही यहां का बजट बढ़ रहा है उस हिसाब से आप को ५१ करोड़ रु० का अनाज बाहर से मंगाना पड़ेगा, इस से ज्यादा अफसोस की बात और क्या हो सकती है । सोलह साल गुजर गये, लेकिन यहां पर मिल्क पाउडर भी बाहर से

[श्रीमती लक्ष्मी भाई]

आता है, नमक भी बाहर से आता है । क्या हम को सोचना नहीं चाहिये कि यह कब तक चलेगा । हमारे अफसरों को यहां पर बैठ कर इस प्रकार से आपस में सोचना चाहिये कि हम यहां कितनी उपज कर रहे हैं ऐग्रिकल्चर से । जहां तक हाथ से काम करने की बात है, उन को हाथ से ज्यादा काम नहीं करना होता है । लेकिन अगर इस संकट के समय पर भी हम आगे नहीं आयेंगे तो हम चाइना का मुकाबला कैसे करेंगे ? चाइना का मुकाबला भी कर सकेंगे या नहीं, यह भी दूसरी बात है, पहले हमारे यहां जो गरीबी है, जो करप्शन है, जो त्राहि त्राहि मची हुई है, उस को खत्म करने के लिये आप को आगे आना चाहिये । हमारे इस विभाग में दो सेक्रेटरी हैं, एक स्पेशल सेक्रेटरी है, वह बहुत अच्छे लोग हैं, मैं उन के काम को भी जानती हूं, फिर हमारे इस विभाग में छः ज्वायंट सेक्रेटरी हैं, बारह डिप्टी सेक्रेटरीज हैं, तेरीस अन्डर सेक्रेटरी हैं और ७५ सेक्शन आफिसर्स है । कुल मिला कर १२९ आदमी होते हैं । इतनी बड़ी फौज हमारे पास है तब मैं यह महसूस करती हूं कि उन को काफी लिखना पढ़ना होता है, बोलना होता है, यह सब ठीक है । उन लोगों की तनख्वाह भी तीन हजार से ४ हजार रु० महीना तक है । यह इस तरह के आदमी हैं जिन को क्रीम कहा जा सकता है, जिस को मलाई कहते हैं । इतनी बड़ी इन की सेना है, फिर उन के साथ भी बहुत से लोग काम करते हैं, सेक्रेटरी के सेक्रेटरी फिर उन के सेक्रेटरी, इस तरह के कई लोग होते हैं । लेकिन परसों मैं सेक्रेटेरियट से गुजर रही थी तो वहां पर चपरासी ताश खेल रहे थे । उसे देख कर मेरे दिल में दर्द हुआ । बहुत से लोगों को सोने का टाइम नहीं मिलता, खाने का टाइम नहीं मिलता, और इतने लोग इस संकट के समय में इस गरीब मुल्क में काम नहीं करते हैं । जब इस तरह लोग यहां पर ताश खेलेंगे तो फिर काम कैसे होगा ? मैं यह बातें ऐसे ही नहीं कह रही हूं । मैं घर घर, गांव गांव गई हूं और दान में जमीन ला कर मैं ने उस की बिक्री की है । मैं खुद एक अफसर मेनटेन कर सकती हूं । मैं अपनी जमीन से इतना उगाती हूं कि १०० गरीब लोगों को खिला सकती हूं । मैं अपने तजुर्बे से बोल रही हूं । टाइम आया था जब कि हिन्दुस्तान में इंडिपेन्डेन्स के लिये स्ट्रगल हुई । उस समय गांधी जी बड़े बन गये । किसी समय में रामचन्द्र भी बड़े बन गये थे । उस समय रामचन्द्र ने बड़ा काम किया । उन के साथ हनुमान भी बड़े बने । आज जब हमारे देश पर संकट है तो एक एक सेक्रेटरी को मार्शल बन कर चलना चाहिये । पन्द्रह स्टेट्स है यहां पर । उन में सेक्रेटरीज को अपनी फौज ले कर चलना चाहिये ताकि इस काम के लिये तजुर्बेकार लोग मिल सकें । जो बच्चे मैट्रिकुलेशन कर के एक या दो साल की ट्रेनिंग ले कर आयेंगे वे हम को क्या बतलायेंगे कि आप के डिपार्टमेंट के अन्दर कितने करोड़ रुपये खर्च होते हैं । यह आप को मालूम है । हम लोग तो जल्दी में बोल जाते है । कितने करोड़ रुपये खर्च करते हैं आप लोगों को यह मालूम है । मेरा तजुर्बा यह है कि मेरे पास आते हुए लोग डरते हैं । ग्राम सेवकायें डरती हैं। अगर हम से कहा जाय काम करने के लिये तो वे कहती हैं कि मेरा काम नहीं है । मैं उन की वेलविशर हूं। मैं आप सब की वेलविशर हूं। मैं किसी को निकालने की बात यहां पर नहीं कहती हूं । मैं नहीं कहती कि आप सारी गल्ती करते हैं । आप के पास मौका नहीं था काम का और आप आराम से बैठे थे इस लिये सारी बातें आप के दिमाग में नहीं आती थीं । मैं एक हफ्ते से तीन साल की रिपोर्टों को पढ़ने की कोशिश कर रही हूं । मैं दस दिन से रात दिन कोशिश कर रही हूं कि कई सालों की रिपोर्ट की कम्पैरिटिव स्टेडी करूं । लेकिन मेरा दिमाग खाली हो जाता है । मैं नहीं कहती हूं कि आप इस तरह की बातों से डरिये । आप के मिनिस्टर बहुत होशियार हैं, आप को बड़े ऐक्टिव मिनिस्टर मिल गये हैं । उन का

मश्वरा आप को मिलना चाहिये लेकिन फिर भी मैं कहूंगी कि एक एक सेक्रेटरी को मार्शल बन कर, जनरल बन कर एक स्टेट में जाना चाहिये। यहां पर पन्द्रह स्टेट्स हैं। सिर्फ पन्द्रह आफिसर्स यहां रह कर काम करें बाकी बाहर जाकर स्टेट्स में काम कर सकते हैं। हमारे यहां भी ऐसे आफिसर्स हैं जो कि दफ्तर में बैठ कर काम नहीं करना चाहते हैं। यहां बैठने से उन को तकलीफ होती है। मेरे पास एक अफसर आया जो कि हैदराबाद से आन्ध्र प्रदेश आया है। उस ने कहा कि मेरे पास प्रैक्टिकल काम नहीं है। टेबल वर्क मुझे पसन्द नहीं है। मैं तो हमेशा बाहर काम करने वाला था। मैं कुर्सी पर बैठना नहीं चाहता डेकोरेशन की तरह से। अगर मुझे तीन चार हजार रुपया दे कर भी कुर्सी पर बिठलाना कोई चाहे तो मैं उसे ठुकरा दूंगा क्योंकि वह मेरी जान खा जायेगा। मैं गांव में जा कर काम करूंगा। आप में भी यही स्फूर्ति होनी चाहिये। लेकिन आप को काम करने का मौका नहीं मिलता। आप स्टेट्स में जायें, मैं आप को तिलक लगाऊंगी, मंगल तिलक, कि सब लोग आप जायें। आप सेना बना कर मार्च कर दें यहां से तो सब लोग आप के पास आ जायेंगे।

हम लोग यहां पर ऐग्रिकल्चर महकमे को बढ़ाना चाहते हैं। ऐग्रिकल्चर का महकमा खेती के काम को देखता है, लेनिंग का महकमा प्लैन बनाने का काम करता है, इरिगेशन का महकमा इरिगेशन का काम करता है। लेकिन यह इरिगेशन का महकमा रात में पानी देना चाहता है किसान रात में पानी देना कहां बर्दाश्त करेगा? वह अपने खेत में पानी देगा या सोने जायेगा। मैं भी इरिगेशन के लिये पानी लेती हूं। मेरा नौकर सिंचाई करने के लिये पानी लेने बैठता है। मेरे पास १६० रु० का बिल आया। अगर मैं नौकर से कुछ कहूं तो वह बोलेगा कि मैं कहां देखता हूं। इस वास्ते सब बातें आप के सामने रहनी चाहियें। आप का तरीका ठीक होना चाहिये। प्लैनिंग वाले प्लैन बनायें, इरिगेशन वाले इरिगेशन ठीक से करें, डेवेलपमेंट वाले डेवेलपमेंट करें और कोआपरेशन वाले कोआपरेशन करें, इस तरह से अलग अलग महकमों का काम होना चाहिये। जब तक आप एक्टिव नहीं होंगे तब तक तरक्की नहीं हो सकती।

अब मैं आपको प्राइसेज के बारे में बताऊं। जो खाने वाले हैं वे कहते हैं कि हम को किसान लूट कर खाए जा रहा है। लेकिन होता यह है कि बीच वाले लूट कर खाते हैं, किसान को तो अपनी फसल का पूरा दाम तक नहीं मिलता। मैं आपको अपना अनुभव बताती हूं। पिछले ८ मार्च को मैं ने अपने खेत से ४० किलोग्राम बैंगन दो औरतों को दस दस आने देकर तुड़वाए और दस आने पैसे रिक्शे के देकर एक मजदूर के हाथों उनको मंडी में बिकने के लिए भेजा, और उस मजदूर को एक रुपया दिया। मेरा बैंगन १२ किलो एक रुपए का बिका और कुल तीन रुपए और साढ़े ६ आने मिले। उसमें से भी दो आना रुपया तोलने वाले ने कमीशन ले लिया। तो इस प्रकार मुझे कुछ नहीं बचा। और मेरी सुपरवीजन की मेहनत व्यर्थ गयी। आप नहीं जानते बैंगन के लिए तीन महीने तक सुपरवीजन करना होता है और खाद और पानी तमाम लगाना होता है। लेकिन जब उसको बाजार में बेचा गया तो कोई आमदनी नहीं मिली। जो कुछ लाभ होता है बीच वाले को होता है। मेरा तो बैंगन १२ किलो एक रुपए का बिका मगर खाने वाले को रुपए का चार किलो मिलता है। पर इसको कौन सोचता है। आप लोग यहां बैठे हैं, इधर से उधर पत्र भेजते हैं, रिपोर्टें बनाते हैं, टाइप करवाते हैं, एक्सप्लेनेशन मांगते हैं, यह काम करते हैं। मैं तो कहती हूं कि इस संकट के समय में आन्दोलन होना चाहिए कि सब महकमों को मिल कर एक साथ काम करना चाहिए।

हमारी चावल की फसल होती है, उसको मुसलसिल पानी मिलना चाहिए लेकिन पानी नहीं मिलता और फसल जल जाती है। मेरे प्रदेश में इरिगेशन की कमी है। जब

[श्रीमती लक्ष्मी बाई]

फसल के लिए पानी चाहिए उस समय नहीं मिलता जिससे फसल नष्ट हो जाती है और किसानों को नुक्सान होता है ।

आप मिलें बनाते हैं, उनका सबसिडी देते हैं, उनको करोड़ों रुपए देकर उनका चलाने की काशिश करते, रहते हैं सबसिडी के पैर लगा कर यह सबसिडी आपका गांवों में किसानों को देनी चाहिए । आपको गांवों की दशा सुधारना चाहिए । गांवों का दूध शहरों में चला आता है, गांवों के बच्चों को दूध नहीं मिल पाता क्योंकि आप सबसिडी देकर उसको शहर वालों के लिए मंगा लेते हैं । शहर वालों को सारी सुविधाएं हैं, सड़कें हैं, डाकखाने हैं, टलीफोन हैं, लेकिन गांवों में क्या है । गांव वालों के मुंह नहीं हैं, वे अपनी बात नहीं कह सकते इसलिए उनके लिए कुछ नहीं किया जाता ।

उपाध्यक्ष महोदय: अब आपको अपना भाषण समाप्त करना चाहिए।

श्रीमती लक्ष्मी बाई : आपके पास बड़े बड़े डिपाटमेंट हैं । इन डिपाटमेंट के लोगों को सब को बाहर चलना चाहिए । मेरा यह सुझाव है ।

मैं हैदराबाद सिटी में रहती हूं । वहां पर प्राइसेज दिल्ली से कम नहीं हैं, ज्यादा हैं । वहां बहुत महंगाई है । उस तरफ आपको ध्यान देनाचाहिए । गांवों में लेबर नहीं मिलती वे लोग शहरों को चले जाते हैं क्योंकि शहरों में सबसिडी मिलती है, घर मिलता है. पानी मिलता है, और उनको भीख मांगने का भी मौका होता है । अगर शहरो में कोई स्ट्राइक होता है तो वह अखबारों में निकल जाता है और उसका फैसला हो जाता है। इसलिए लेबर शहरों को चलो जाती है ।

उपाध्यक्ष महोदय : अब आप समाप्त करें ।

श्रीमती लक्ष्मी बाई मैं बहुत कम बोलती हूं । मुझे बजट पर भी बोलने का स य नहीं मिला । मैं दो मिनट और बोलना चाहती हूं । मेरे दो सुझाव हैं । आपको पता नहीं कि गावों में क्या हालत है । मेरा सुझाव है कि आपको सारे मुहकमों को एक साथ मिला कर गांवों का काम करना चाहिए और यह देखना चाहिए कि गांव वालों का इरीगेशन मुहकमे से कितनी प्रतिशत बिजली मिलती है, और दूसरे विभागों से क्या प्रतिशत मिलता है । गांवों में हाउसिंग की भी समस्या है । आप ने शहरों की हाउसिंग समस्या को सुलझाने के लिए १०० करोड़ रुपया खच किया है लेकिन गांवों को क्या देते हैं । मैं कहती हूं कि हर एक मुहकमे से ज्यादा से ज्यादा परसेंटेज में लाभ किसानों का मिलना चाहिए और आपको दिलाने की काशिश करनी चाहिए ।

Shri Liladhar Kotoki (Nowgong): Sir, I rise to support the demands of the Ministry of Food and Agriculture. A very heavy task has fallen on this Ministry, more especially after the emergency has come to our country. It has been declared that in modern world defence and development have to go together. Development has two facets; one is industry and the other is agriculture. In fact, agriculture is more basic because that has to support the industry also.

But what is the position of agriculture today? Certain targets were laid down in the third Five Year Plan. If we take some of the items, it is very doubtful whether we will be able to achieve the targets by the end of

the third Plan, leave alone increasing the targets under the emergent needs that have arisen. In the third Plan, the target of foodgrains is 100 million tons. But the performance has been on the down-grade. In 1960-61, the total production of foodgrains was 79·7 million tons. Last year, in 1961-62, it has gone down by 1·4 million tons. Therefore, it is a very serious matter to which this House and the Ministry particularly should give attention.

I am glad the National Development Council recently laid high priority on agricultural programmes and the Ministry has stated in the report that they have formulated some programmes and circulated them to the States. The difficulty lies there. You will remember that it was stated that so far as the agricultural base is concerned, it should be fulfilled in the first Five Year Plan. That was not done. It was reemphasised in the second Plan and in the third Plan also the same thing has happened. What are the reasons? There are many reasons, but the main reason is, as many hon. Members have stated already, there is absolute lack of coordination between the various agencies that contribute to the production of agricultural commodities. This is a serious thing which should be looked into immediately and set right. There are several agencies like irrigation, cooperation, supply of necessary implements, marketing, credit, etc. Many hon. Members have already referred to it and I will not take much time of the House in repeating it. I will insist that it is no good shifting the burden to this or that agency. It is the Agriculture Ministry which must own responsibility and gear up the other agencies which contribute to the production of agricultural commodities. Somebody must take the responsibility.

It is stated in the third Plan—it was mentioned in the previous Plans also—that there should be village production plans. So far as my experience goes, there are very few villages which have formulated these plans, leave alone implementing them. Here again, I would request the Ministry to insist—whatever agencies they are at the village level; in this case I think it is the village panchayats—that the village panchayats and the service cooperatives together must draw up their village production plans. In that, the Ministry, through their advisers and expert officers, should advise them and guide them. Unless you prepare the plans at the village level field-wise, how can you know what are the drawbacks there and what the difficulties are of the farmers at a particular field? Without knowing that, how can you give them the necessary help and fillip?

Then, a very important question has been raised, and that is about the guarantee of a fair minimum price to the farmers in respect of every major crop. I am glad, in the case of wheat and cotton that has been done. In the case of rice also this minimum price has been linked with the procurement price. Here also it has to be seen whether the farmer actually gets the minimum price. My experience, here again, is not very encouraging. Sometimes the prices are announced a little too late. Take the instance of jute. The minimum price at Calcutta was fixed at Rs. 30 per maund for Assam bottom. But, as many hon. Members have already referred to it, the price was fixed at such a time when all the jute had gone out of the hands of the farmers in most of the cases. Therefore, care should be taken to see that this does not happen. In this connection, my suggestion would be that the prices should be announced for a period of two or three years. So far as the Third Plan is concerned, we have three years more. I do not know what is the difficulty in announcing the minimum prices in respect of major crops for the coming three years. Again, in the matter of fixation of prices, one thing has to be looked into and that is the incidence of the various taxes imposed by the Centre, the States and the panchayats, which affect the farmers and ultimately the

[Shri Liladhar Kotoki]

cost of production. While fixing the prices this aspect should also be borne in mind.

Having said this, I will draw the attention of the Ministry to some special problems pertaining to the north-east zone of India, particularly Assam, because most of the agricultural crops are produced in the plain districts of that zone. Also, as it is known to the House, that zone is the immediate war zone, and the greatest difficulty of that zone is the transport bottle-neck. Last time, it happened, we suffered from transport difficulties and the price of jute went down very abnormally. Therefore, when we are developing for defence, we have to keep this in mind. In that case, it is inevitable that more and more steps should be taken to make that zone as self-sufficient as possible. Today, except rice, most of the commodities have to be brought from outside the State, and that consumes a good part of the meagre transport that we have. It is possible to grow all these things in the State. I wonder why the steps which are feasible are not taken to develop agriculture there.

Here, I will try to suggest a few things for the consideration of the Ministry. We have plenty of rain, and it is so abundant at times that it brings misery to the people. In the last ten years the annual average loss of crops and other properties works out to Rs. 4·5 crores, whereas the annual average of the increase in agriculture is only Rs. 1·5 crores. Therefore, it is in the reverse order and that has adversely affected the economy of the State. Where there is in the last ten years 36 per cent increase from the agricultural sector for the country as a whole, the corresponding increase in Assam is only 13·5 per cent. Then again, it has told upon the *per capita* income of the State. Whereas there is a gradual increase of the all-India average, there is a downward trend in the *per capita* income of the State. From all these considerations, it is highly important that adequate steps should be taken so that the agriculture of the State can be rescued from the onslaught of floods, draught and other drawbacks.

Here my suggestion is that flood control and irrigation should be taken together and brought under the Ministry. There is no major irrigation project here. Leaving aside that, even the very few medium and minor irrigation projects so far executed here are dependent upon monsoons. What I would suggest is that attention should be given to see whether irrigation facilities could not be extended to the farmers for raising crops during the winter and spring months. If that is done, then the losses caused to crops during floods could be compensated to a large extent. Therefore, it should be seen whether the farmers could be helped with irrigation to cultivate Boro and Ahu varieties of paddy which are cultivated in winter and spring respectively.

Then, another very distressing factor of our agriculture is the poor quality of livestock. They are diminutive in form. So far as draught cattle are concerned, they cannot pull the improved ploughs or heavy carts. So far as milch cows are concerned, their yield is very poor. There are various reasons, the main being malnutrition. It is possible to improve the breed if steps are taken. Some steps have no doubt been taken, but they are not enough.

Then I take the question of fisheries. We have plenty of fisheries, both rivers and beels. But most of the beels have deteriorated to such an extent that they no longer produce any fish. If these beels are reclaimed we will be able to produce a large quantity of fish not only for the State but also for our defence personnel and, may be, we may be able to export also.

Then there is the question of fruits. We grow plenty of pineapples and

oranges and in the hills we have large quantities of mangoes. But, for lack of facilities for preservation of these fruits most of them go waste; they cannot be marketed outside and therefore there is a colossal loss. I would suggest, therefore, that measures for preservation of fruits should be accelerated. There are one or two factories already established for the purpose, but I think more and more of such factories should be established there.

The last point that I would like to refer to is about the production of poultry and also goats and sheep. Some steps have been taken, but it is possible to further increase the production of these things. If we do that, then we will be able to supply to the Defence personnel. Instead of taking them from outside, again taking a large part of our transport, it will be very useful for them, and it will also give added income to our farmers.

That applies in the case of vegetables also. In the case of vegetables, last time it so happened that the people produced them in such large quantities that they did not have any market and the Ministry had to come to the rescue of the farmers. But here again, if steps are taken for preservation of vegetables by preparing pickles etc., they can be well preserved and the waste may be avoided.

With this submission I support the Demands of the Ministry.

श्री योगेन्द्र झा : उपाध्यक्ष महोदय, भारत सरकार के खाद्य तथा कृषि मन्त्री अमरीकी अन्न के आयात के आधार पर अपनी पीठ अपने हाथ से अपनी पसन्द से जी भर कर थपथपा लें, किन्तु यह एक कटु सत्य है, वर्तमान वास्तविकता है कि आज भी भारत भूखा है । हजारों लाखों नहीं, करोड़ों भारतीय आज, भी, स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पन्द्रह वर्ष बाद, दो पंच-वर्षीय योजनाओं के पश्चात् तृतीय पंचवर्षीय योजना के प्रथम दो वर्षों की समाप्ति के बाद भी, भूखे हैं । सुरक्षा, नियोजित एवं उत्तरोत्तर विकास की दृष्टि से यह गम्भीर स्थिति अत्यन्त खतरनाक है, भीषण सम्भावनाओं से पूर्ण है । चीनी आक्रमण के संदर्भ में यह स्थिति सचमुच भयावह है, अशुभ परिणामों की ओर स्पष्ट संकेत है । यह एक निर्विवाद तथ्य है कि चीनी आक्रमण का लक्ष्य सिर्फ सैनिक नहीं । चीनी शासकों की दृष्टि भारतीय समाज-व्यवस्था के पूर्ण परिवर्तन पर है । लाल भारत उसका निशाना है : आज सैनिक तैयारी पर उचित ही पूरा जोर है । परन्तु खाद्य मोर्चा अगर कमजोर रहे, तो पूर्ण सैनिक शक्ति के रहते हुए भी साम्यवाद के मुकाबले में प्रजातन्त्र की पराजय होगी । इसका कारण यह है कि साम्यवाद में रोटी का आकर्षण है । राष्ट्रपिता के शब्दों में गरीबों के लिए रोटी ही भगवान् है । परन्तु दुख तथा दुर्भाग्य की बात है कि भूख की इस विकट समस्या का हम चीनी आक्रमण से कम भयानक और विनाशकारी क्यों समझते हैं ।

अभी कुछ दिन पहले योजना आयोग किस निष्कर्ष पर पहुंचा ? वर्तमान प्रगति की गति से बीसवीं शताब्दी के अन्त तक यानी ३८ साल बाद भी भारत की जनसंख्या का एक तिहाई भाग भरपेट भोजन पाने से वंचित रहेगा । अभी तो दो-तिहाई भाग, यानी २९, ३० करोड़ नर-नारी भरपेट भोजन पाने से वंचित हैं । क्या यह स्थिति सन्तोष करने योग्य है, पीठ थपथपाने लायक है ?

कहा जाता है कि पाटिल साहब साम्यवाद-विरोधी हैं । किन्तु क्या यह शर्मनाक तथा दर्दनाक स्थिति साम्यवाद को खुला आमन्त्रण नहीं है ? राष्ट्र के अन्दर अशान्ति और बगावत की पृष्ठभूमि

[श्री योगेन्द्र झा]

नहीं है ? इसके उत्तर की आवश्यकता मुझे नहीं है, इस पर शीघ्रता से गम्भीरतापूर्वक विचार किये जाने की जरूरत है ।

यह कहते हुए वास्तव में बहुत दुख होता है कि उत्पादन-वृद्धि की सारी चेष्टा पूर्णतया असफल सिद्ध हुई है । सरकार को अपनी असफलता स्पष्ट शब्दों में निसंकोचपूर्वक स्वीकार करनी चाहिए । १९६२-६३ की आर्थिक समीक्षा के "कृषि उत्पादन" शीर्षक के अन्तर्गत कहा गया है कि "पहली दो पंच-वर्षीय योजनाओं के दस वर्षों में कृषि उत्पादन में ३.५ प्रतिशत की वृद्धि हुई है । तीसरी योजना के पहले वर्ष में कृषि-उत्पादन उतना ही अधिक रहा, जितना कि पहले वर्ष में था । १९६१-६२ में अन्न का उत्पादन ७८६ लाख टन हुआ, जबकि १९६०-६१ में वह ७९७ लाख टन था ।" क्या इससे बहुत ही कम शब्दों में यह स्वीकार नहीं किया जा सकता था । कि १९६१-६२ में १९६०-६१ की तुलना में कृषि उत्पादन में वृद्धि नहीं हुई ? हां, अन्न का उत्पादन ११ लाख टन कम हो गया । अच्छी फसल का सरकारी प्रयास का फल तथा बुरी फ़सल का प्रकृति के प्रकोप का कुफल कहने की इस बुरी परम्परा का कब अन्त होगा ? शायद १९५२ के आम चुनाव को दृष्टि में रख कर प्रधान मन्त्री ने घोषणा की थी कि १९५१ से अन्न का आयात बन्द कर दिया जायगा । मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या वह दिन कभी आने वाला भी है ।

फोर्ड संस्थान के एक विशेषज्ञ दल के अनुसार भारत की बढ़ती हुई जनसंख्या का भोजन जुटाने के लिए तृतीय योजना तक ११० मिलियन टन अन्न का उत्पादन चाहिए । हमारा लक्ष्य १०० मिलियन टन का है । ८ प्रतिशत की गति से कृषि उत्पादन बढ़ा कर ही हम अपनी जरूरत की पूर्ति कर सकते हैं, अन्न की समस्या का समाधान कर सकते हैं, देश को अन्न के मामले में आत्म-निर्भर बना सकते हैं । किन्तु सरकारी दावे के अनुसार भी ३.५ प्रतिशत की गति से दस वर्षों तक उत्पादन बढ़ कर अब गति अवरुद्ध हो गई है, बन्द हो गई है । पिछले दस वर्षों में अधिक खेत जोत में लाने की वजह से २.०८ प्रतिशत तथा प्रति एकड़ १.५४ प्रतिशत की दर से वार्षिक उत्पादन वृद्धि हुई है । उत्पादन-वृद्धि के लिए हमारा अधिक प्रयास प्रति एकड़ उपज में वृद्धि की दिशा में होना चाहिए । इसका कारण यह है कि नई जमीन जोत में लाने का क्षेत्र अति सीमित है । अपने देश में प्रति एकड़ दो-तीन गुना अधिक उपज में वृद्धि सम्भव है । पिछले दस वर्षों में हुई वृद्धि का सरकारी दावा नितान्त नगण्य तथा घोर निराशाजनक है । मैं तो ऐसा मानता हूं कि प्रति एकड़ उपज वृद्धि का सरकारी दावा सर्वथा मिथ्या है । कुछ विशेषज्ञों का समर्थन भी इस के पक्ष में है ।

योजना के प्रारम्भ काल में इकट्ठे किये गये आंकड़ों के संबंध में राष्ट्रीय-नमूना सर्वेक्षण के प्रथम दौर का एक मुख्य निष्कर्ष इस प्रकार है :

"Official statistics seem to be under-estimates by something between roughly 20-25 per cent."

इस तरह आंकड़ों के आधार को ही चुनौती दी गई है । सरकारी आंकड़ों की सत्यता के विरूद्ध अगर इस आरोप को सत्य माना जाये—न मानने का कोई कारण नहीं— तो उत्पादन-वृद्धि के सारे सरकारी दावे सरकारी फाइल के नीचे दब जाते हैं । प्रधान मंत्री की घोषणा तो इतिहास का एक अच्छा मजाक हो गई । इस का कारण यह है कि १९५० में जहां २१२५ हजार लांग टन खाद्यान्न का आयात हुआ, वहां १९६० में ५०५६ हजार लांग टन अर्थात् लगभग ढाई गुना अधिक । अधिक मात्रा में भोजन मिलने का प्रश्न भी बड़ा असन्तोषजनक है । १९५४ में १३.४ औंस प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्ध था, किन्तु १९५८ में यह घट कर १२.१ औंस हो गया, जबकि १९५४ के मुकाबले में १९५८ में लगभग चार गना अधिक अन्न का आयात हुआ । यह शोक और शर्म की बात है ।

उचित कीमत का प्रश्न बड़ा महत्वपूर्ण है । सूदखोर, महाजन, मुनाफाखोर व्यापारी तथा मिल-मालिकों की लूट से छुटकारा दिला कर किसानों को अधिक उत्पादन के लिये अच्छी प्रेरणा दी जा सकती है । इस तरफ सरकार की प्रवृत्ति आश्चर्यजनक ढंग से द्विविधापूर्ण रही है । किसान-विरोधी पूंजीपरस्त नीति होने के कारण किसानों की लूट होती रही है । पाटिल साहब की प्रतिक्रियावादी मूल्य-नीति के कारण सम्पूर्ण भारत के गन्ना उत्पादक तबाह हैं । चीनी उद्योग संकट में है । **नैशनल हेरल्ड**, जो कि कांग्रेस समर्थक पत्र है, के अनुसार सिर्फ उत्तर प्रदेश में इस वर्ष किसानों को पिछले वर्ष की तुलना में एक करोड़ रुपया गवाना पड़ा है, जबकि उत्तर प्रदेश के चीनी कारखानेदार १५ करोड़ रुपये का अतिरिक्त मुनाफा चीनी की कीमत बढ़ा कर लूट रहे हैं । अभी बिहार विधान सभा में एक मंत्री ने कहा है कि केन्द्रीय सरकार की गलत नीति के कारण और गन्ने की कीमतें वक्त पर न मिलने के कारण बिहार में पहले साल के दस करोड़ मन की तुलना में इस वर्ष पांच करोड़ मन गन्ने का उत्पादन हुआ है, अर्थात् उपज आधी घट गई है ।

जूट उत्पादकों की लूट निर्दयतापूर्वक हो रही है । जब कभी जूट की कीमत का सवाल उठाइये, तो यह कहा जाता है कि आसाम वाटम की कीमत तीस रुपये मन कलकत्ता के लिये तय कर दी गई है । माननीय मंत्री जी से मैंने एक पत्र लिख कर पूछा कि बिहार राज्य के अधिकतर स्थानों में १८, १९ रुपये प्रति मन की दर से जूट खरीदा जा रहा है, क्या यह उचित कीमत है । जवाबी पत्र में इस प्रश्न का उत्तर नहीं था । मैंने यह भी कहा कि वफर स्टाक एजेंसी की खरीद में बड़ा भ्रष्टाचार है । पच्चीस रुपये में खरीदते हैं, तो तीस रुपये की खरीद दिखाते हैं । इसका कोई जवाब नहीं दिया गया । फिर मैंने यह सुझाव दिया था कि जो भी उचित कीमत तय हो, वह उत्पादकों को मिले, इसलिये सरकार जूट की खरीद में हिस्सा ले । इस सुझाव को पाटिल साहब ने बड़ा खतरनाक बताया । समाजवादी मंत्रीमंडल के एक मंत्री से ऐसे उत्तर की आशा नहीं थी । किन्तु सभी जानते हैं—कांग्रेसजन तथा स्वयं पाटिल साहब भी—कि वह किस तरह के समाजवादी हैं । अब सुना है कि कई राज्यों को लाखों रुपये पटसन खरीदने के लिये अथवा उसके भाव को उचित स्तर से नीचे नहीं गिरने देने के उद्देश्य से दिये गय हैं । लेकिन उत्पादकों के घर में अब पटसन नहीं है । इसलिये सरकार की इस सहायता का लाभ व्यापारी वर्ग को ही मिलेगा । अभी कुछ दिन पहले कपास-उत्पादकों की समस्या देश के सामने आई । मैं सरकार से निवेदन करूंगा कि वह अपनी मूल्य नीति के द्वारा किसानों का शोषण बन्द करे । सरकार की द्विविधापूर्ण नीति का विश्लेषण प्रो० डी० आर० गाडगिल ने इन शब्दों में किया है :

"It is possible to interpret this amazing behaviour only on the basis that stabilisation of prices

[श्री योगेन्द्र झा]

of agricultural products is sidetracked because of certain consequences flowing from it which are not liked. A programme of stabilisation could be undertaken through either the entry of government in substantial way in trading in agricultural products or a rapid co-operativisation of the field combined with certain overall operation by government. Either of these courses will affect seriously the strong entrenched position of the money-lender-trader elements whose combination of the two occupation have given them a stronghold on the Indian rural economy. Historically, the present capitalistic community in India has grown primarily on the rural money lender-trader base. Any undermining of the position of this base would inevitably spell disaster to the trading super-structure in the urban areas and may damage even urban financial capitalism, i.e., affect vitally those interests which are today politically and economically the most powerful in the country."

क्या इस रहस्यमय काल्पनिक समाजवादी सरकार के अन्दर इतनी हिम्मत है कि पूंजीवाद के गढ़ को एक धक्का दे सके।

"Recent government policy in the co-operative field also supports this hypothesis. All recent experiments which have been successful to any significant extent in transferring rural finance marketings and processing out of private hands to those of co-operative organisations are obviously suspected, and a programme which has set this trend in motion and made its progress possible is being challenged and sabotaged."

उद्धरण लम्बा हो जाने के बावजूद भी मैं एक वाक्य और उद्धृत करना चाहता हूं।

"co-ordination simplification or decentralisation of official agencies are not likely to receive support in high official circles which are again, of recent years, developing close connections with organised business."

जूट की कीमत के प्रसंग में बातचीत करते समय एक भूतपूर्व उपमंत्री ने भी यह कहा था कि उच्चतम पदों पर आसीन सरकारी अधिकारी जूट उद्योगपतियों के पक्ष की वकालत करते हैं। इस तरह मुनाफा अंध पूंजीपति, सत्ता-अन्ध शासक दल तथा अधिकार अंध अधिकारी वर्ग के संयुक्त अंधाधुंध शोषण का शिकार कृषक बना है।

आधे दिल से प्रारम्भ किये गये लगड़े तथा अर्थहीन भूमि सुधार उत्पादन वृद्धि के मार्ग में बाधक है। साहसपुर्वक, पूरे दिल और पूरी ताकत के साथ भूमि संबंधों में क्रांतिकारी परिवर्तन करना है। उचित कीमत तथा क्रांतिकारी भूमि सुधार कृषकों को उत्पादन वृद्धि के लिये प्रेरणा देने के साथ ही सामाजिक न्याय की दृष्टि से अनिवार्य है। उत्पादन वृद्धि के लिये फिर भी ये ही कदम काफी नहीं हैं। सिंचाई, खाद, पूंजी, उन्नत बीज तथा उन्नत औजार का उचित परिमाण में उचित समय पर प्रबन्ध करना है। आश्चर्य की बात है कि ४० लाख एकड़ जमीन को सींचने लायक पानी बेकार जा रहा है। कहा जाता है कि नहरें तो सरकार ने बना दीं, अब फील्ड चैनल्स किसान बनायें। आज जब खाद्यान्न की इतनी अधिक आवश्यकता है, जरूरत इस बात की है कि युद्ध स्तर पर शीघ्र सारे फील्ड चैनल तैयार किये जायें। पटवन की दर कम करके सिंचाई की तरफ किसानों को आकर्षित किया जाये। अगर संभव हो तो नई नहरों से दो तीन साल तक पानी मुफ्त देकर सिंचाई क्षेत्र को व्यापक बनाया जाये जिससे तत्काल उत्पादन बढ़ेगा। लघु सिंचाई

के लिये कोई प्रभावशाली कदम उठाया जाये। अबतक का अनुभव कम से कम बिहार राज्य का बड़ा दुःखदायी रहा है।

रासायनिक खाद का प्रचार बढ़ा है किन्तु घरेलू खाद का व्यवहार घटा है। कम्पोस्ट के गढ़े बढ़े हैं किन्तु कम्पोस्ट नहीं। गोबर जलाने के विरुद्ध एक मनोवैज्ञानिक तथा व्यवहारिक आंदोलन चलाया जाये। इसके लिये यह आवश्यक है शीघ्र लकड़ी देने वाले वृक्षों का प्रचार हो। वन महोत्सव को उत्सव की परम्परा से निकाल कर वास्तविक बनाया जाये।

कृषि उत्पादन की वृद्धि के मार्ग में भारतीय कृषकों की जगत प्रसिद्ध दरिद्रता भी बड़ी बाधा है। देहात में रहने वाले परिवारों में ७०–७५ प्रतिशत परिवार भूमिहीन हैं, २५ प्रतिशत परिवारों के पास एक एकड़ से कम जमीन है। सिर्फ एक प्रतिशत परिवार हैं जिनके पास ५० एकड़ से अधिक जमीन है।

निःसन्देह सहयोगी खेती हमारी कई समस्याओं का समाधान कर सकती है। दूसरा कोई विकल्प नहीं है। सहयोग के आधार पर ही छोटे किसानों की ऋण समस्या सुलझ सकती है और उन्नत बीज, औजार, खाद तथा लघु तथा मध्यम सिंचाई की व्यवस्था की जा सकती है। लेकिन सरकार इन समस्याओं का समाधान केवल घोषणाओं के आधार पर कर लेना चाहती है। मेरा सुझाव है कि उद्‌घाटनम, भाषणम, भोजनम से काम चलने वाला नहीं है। इससे समस्याओं के समाधान होने वाला नहीं है।

द्वितीय विश्व युद्ध के समय कई पश्चिमी राष्ट्रों ने अपनी खाद्य समस्या का तुरन्त समाधान भूमि सेना संगठित करके किया था। अपने यहां भी इसकी आवश्यकता है। बंजर भूमि तोड़ने, तालाब खोदने पैन नहर बनाने तथा कई अन्य कामों के लिये एक बड़ी भूमि सेना संगठित की जाये।

किसानों को अधिक पूंजी लगाकर खेती करने को प्रोत्साहित करने के लिये फसल बीमा की अनिवार्य योजना चालू की जाये।

अन्त में मैं यह कहना चाहता हूं कि सायणाचार्य के अनुसार

बुबुसमानः रुद्र रूपेण अवतिष्ठते

भूखे मनुष्य रुद्र के अवतार हैं। अगर असंख्य भूखे प्राणियों ने रुद्र के समान प्रलय नृत्य किया तो सर्वनाश निश्चित है। इसलिये मैं प्रार्थना करूंगा कि कृषि उत्पादन की वृद्धि तथा कृषकों के साथ सामाजिक न्याय किया जाये तथा उचित भूमि सुधार करने का ठोस फैसला किया जाये।

Shri B. K. Das (Contai): Mr. Deputy Speaker, Sir, for the last few years we have been watching with interest the schemes and programmes that we have taken up for the improvement of our agricultural production. When we look at the figures of our production for the last three years, it appears that we have reached almost a static condition. We find that there has been some shortfall in some directions also. Even though there has been some increase in acreage, the yield has not increased and the total production has gone down. Last year's production also does not give a better prospect. We find that the production of rice will go down. We find that there is an attempt made of making a closer study of the reasons for this state of affairs.

The present emergency enjoins on us the duty of increasing our production and taking it to a stage where we are free from anxiety. For the last few years we have been importing foodgrains to the tune of Rs. 150 crores, including the huge amount of freight charges that we have been paying. In the present condition, when we are so much in need of foreign exchange, this state of affairs is very alarming. We have

[Shri B. K. Das]

been trying to take measures that we may be self-sufficient in food, but all the measures that we have been taking have not produced results to the extent that they should. The Package Programme, which is the latest scheme for intensive agriculture, is a costly measure although it is giving us results, I have a doubt in my mind whether we shall be able to take up such a costly experiment in all our districts within a very short period of time.

In my own province of West Bengal I find a farmer wants as much as a credit of Rs. 2,294|- out of his total expenditure of Rs. 2,712|-. If for the cultivation of six acres of land a farmer requires so much money and credit also, I think, it will not be possible to give so much aid to every farmer who wants to go in for intensive cultivation. Of course, in areas where there is provision for irrigation and where we can use fertilisers and better seeds to advantage and without any fear of any loss, we may go in for such an elaborate programme of intensive cultivation, but in areas where a farmer will think many times before he can go in for such a large investment and he does not also have the money for such investment, it is not possible to increase production.

Outside the package programme areas our programme for improving our agriculture is being implemented through the block development programme that we have got in hand. It was started more than ten years ago. For all these years we have been trying to take intensive agriculture and all the advanced methods to our farmers through our block development programme, but the snag is that the individual farmer has not been taken care of to the extent that he should have been Here is a remark in this connection from the Project Leader of IADP who says:—

> "The IADP is based upon the fundamental fact that only the individual cultivator can increase food production."

I have a doubt in my mind that we have not given proper or adequate attention to our individual farmers. There are schemes. There are methods also, but whether the individual farmer is able to take advantage of those methods or schemes we have not taken so much care to see.

In our blocks with which we have been associated as Members of Parliament we find that we have to prepare a village production plan; we have to prepare plans for small irrigation. There is also an overseer to help the villagers with the preparation of those plans. But in my experience of the last several years I do not find that those officers go to the farmers and help them; rather, if there be any person to help those farmers prepare the details of the plans and submit to the BDO and other officers, they are often neglected. Then, many faults are found and often those schemes are rejected. In that way the individual farmer does not get proper attention and encouragement. The individual cultivator is to be taken care of more than anybody else. What we find is that that is not done in a proper way.

We find that there is a scheme for giving fertilisers, good seeds and other implements, but during these ten years very few places in the block development programme have been there where all these have been adequately provided for and where the individual cultivator can easily, without much difficulty, take advantage of those things. If we are able to endeavour in the proper way and the individual cultivator is taken care of, I think, the result that we are trying to achieve will be achieved in a much easier way than has hitherto been done.

In some matters we have not taken proper care, like, compost making. Some years ago there was a prize for compost making and for other things also which the villager might very easily have done. We are not taking

care of the green manure; rather, we are trying to give fertilisers to the farmer. Fertiliser has its own use and its own utility in its proper place, but it is inconceivable that with our indigenous production and import of nearly Rs. 50 crores worth of fertilisers, we shall be able to provide fertilisers to every individual cultivator.

We have got only 24 stations throughout the country where soil can be examined. If, without proper examination of the soil, we go on using fertiliser, ammonium nitrate, to the extent that the Japanese method of cultivation requires, there is apprehension—and from practical experience we find—that soil deteriorates and without cowdung and other kinds of manures the result becomes quite the contrary. So, we should give more attention, as much as possible, to compost and green manure in our village areas. If, over and above that, use of fertiliser is possible and irrigation water is also assured, we can go in for fertilisers and other things.

Along with that we are not taking care of the cattle. Our agriculture is inextricably connected with the cattle population. The cultivator has not proper kind of bullocks, nor has he proper kind of cattle to give him milk and adequate quantity of manure. If we take proper care of our individual cultivators and provide them with all things that are possible under the present conditions, we shall be able to have better results.

There is not much time at my disposal and so I shall touch only one other point and finish my speech. We are talking so much of training—training in agriculture, training in use of better implements and training in better agricultural methods and processes. We have been arranging for some training, no doubt, for our village level workers, Gram Sahayaks and other people. But there are so many youth clubs and so many young farmers and other people who can be made progressive in their outlook towards agriculture. We are not giving proper training to them; we are not arranging for proper education for them. Even in the higher sphere where we require higher education for our agricultural students, we are not having proper arrangements.

In my own State of West Bengal, there is only one agricultural college for a graduate course. In such a province where 70 per cent of people depend on agriculture, we have only this arrangement. There was another agricultural college also which has been closed. Of course, the State Government has to take care about that. But I would say, if it is also the duty of the Central Government to arrange for proper agricultural education, they should also see why we are lacking in such arrangements.

15 hrs.

There is another thing in the matter of food production. I have already made some mention about milk. In the matter of fisheries also, we are not taking proper care. Recently, we find, the production of fish has been transferred to the Food Department. That also is in a very bad way. We are having vast lakes and reservoirs in big river projects. I can say this much that the fish production in those reservoirs is negligible and the hon. Minister should see why the condition is so miserable there.

श्री सिंहासन सिंह (गोरखपुर) : उपाध्यक्ष महोदय, बजट के सन्दर्भ में अभी पत्रों में निकला था कि गृह मंत्रालय अपने सचिवालय में करीब ४ करोड़ रुपय की बचत कर रहा है। उन में यह कहा गया था कि दो डिपुटी सेक्रटरी, चार अंडर सेक्रटरी और कितने ही असिस्टेंट उस मंत्रालय से ट्रांसफर कर के और मंत्रालयों में भज जा रहे हैं। जहां तक इस मंत्रालय का सम्बन्ध है, सेक्रेटेरिएट के खर्च में १९६२–६३ की अपेक्षा १९६३–६४ में कमी के बजाय बढ़ोतरी हो रही है। पहले जवाइंट सेक्रेटरी

[श्री सिंहासन सिंह]

पांच रहे, लेकिन अब वे छः किये जा रहे हैं। डिपुटी सेक्रेटरी नौ रहे, किन्तु अब बारह किये जा रहे हैं। अंडर सेक्रेटरी ३१ रहे, लेकिन अब ३३ किए जा रहे हैं। सेक्शन आफिसर्ज, ७१ रहे, लेकिन अब ७५ किये जा रहे, हैं। इस को इंक्रीज इन प्रोडक्शन कहा जा रहा है। ठीक है, आदमियों की वृद्धि हुई है, अन्न की वृद्धि तो नहीं हुई है। इस प्रकार इस मंत्रालय के सचिवालय पर लगभग २० लाख रुपये का खर्च बढ़ गया है, जब कि इंगलैंड में इस मंत्रालय पर जो खर्च होता है, वह १९६१-६२ में मुकाबले में ६,६८ हजार रुपय बढ़ा है। मंत्री महोदय से मेरा अनुरोध है कि वह कृषि विभाग के मंत्री हैं। वह देश के इस आपत्तिकाल में अपना आदर्श पेश करें और जहां तक हो सके, अपने आफिसरवर्ग की संख्या को न बढ़ायें। इस प्रकार जो रुपया बचे, वह कृषि की तरफ ले जायें, ताकि उस से देश की तरक्की हो, और अन्न की पैदावार अधिक हो।

अब मैं आप का ध्यान इस तरफ दिलाना चाहता हूं कि इस मंत्रालय की रिपोर्ट से मालूम हुआ कि इस बरस भी हम लोग २,५७,३१,३६,००० रुपये का अन्न बाहर से मंगायेंगे। इस मंत्रालय की मांग ३,६६,३०,००,००० रुपये की है, जिस में से २,५७,३१,३६,००० रुपये की भारी रकम केवल अमरीका आदि देशों से अन्न लाने के लिये रखी गई है। इस के साथ ही लगभग ५२ करोड़ रुपये की मांग फर्टलाइजर के लिये है। जहां तक फर्टलाइजर का सम्बन्ध है, उस के आंकड़ों से यह मालूम होता है कि देश की जरुरत ३४ लाख टन की है, जब कि हमारे देश में कुल ८.३४ लाख टन पैदा होता है और ९.५४ लाख टन बाहर से मंगाया जाता है। इस तरह १७.८८ लाख टन पूरा किया जाता है। चूंकि हमारे देश की आवश्यकता ३३.४२ लाख टन की है, इस लिए अभी १६ लाख टन फर्टलाइजर की कमी है। इस सम्बन्ध में मेरा नम्र सुझाव यह है—और यह मेहता कमेटी रिपोर्ट का भी सुझाव है—कि बाहर से अन्न मंगाने के बजाय अच्छा होता कि हम फर्टलाइजर मंगाते और काश्तकारों को देते। जब हम लगभग २,५७,३१,३६,००० रुपय बाहर से अन्न मंगाने पर खर्च करते हैं, तो क्या यह उचित नहीं होगा कि काश्तकारों को अधिक खाद मुहैया करने के लिए हम ५२ करोड़ रुपये के बजाय ५७ करोड़ रुपये खाद मंगाने पर खर्च करें और फिर देखें कि यह रकम खर्च करने के बाद इस देश में कितना ज्यादा अन्न पैदा किया गया और बाहर से आने वाले अन्न में कितनी कमी हुई। मेहता कमेटी रिपोर्ट के जिस सुझाव का मैं ने अभी जिक्र किया है, अभी उस पर अमल नहीं हुआ है। उस सुझाव के आधार पर मैं कहना चाहता हूं कि सरकार के अपने कहने के मुताबिक १६ लाख टन फर्टलाइजर की कमी है। सरकार ५२ करोड़ रुपया खर्च कर के लगभग ९ लाख टन फर्टलाइजर बाहर से मंगा रही है। इसलिए अगर ५७ करोड़ रुपय इस के लिए खर्च किये जायें, तो लगभग १० लाख टन फर्टलाइजर आ सकता है। उस फर्टलाइजर को काश्तकारों में वितरण किया जाय और फिर देखा जाय कि पैदावार कितनी बढ़ती है।

श्री क० ना० तिवारी (बगहा): अगर खाद डालने की कैपिसिटी हो और पानी का इन्तजाम हो, तभी यह खाद काम करेगी।

श्री सिंहासन सिंह: उस की चिन्ता माननीय सदस्य न करें। पानी का इन्तजाम काश्तकार कर लेता है। हम तो यह देखते हैं कि पानी के लिये जो रुपया दिया जाता है, वह व्यय नहीं होता है। ये सब आवश्यक काम तो किये नहीं जाते हैं, केवल बाहर से अन्न मंगा कर देश को जिलाते रहना कोई अकलमन्दी की बात नहीं है। हम अपने देश में वह अन्न पैदा कर सकते हैं।

हमारे यहां दो क्षेत्र हैं, शहरी और काश्तकार । काश्तकारों को हम खाद देते हैं, जिस के लिये एक योजना बनाई गई है । उस योजना के अन्तर्गत बाहर से जो खाद मंगाया जाता है, उस को अपने यहां के खाद से मिला कर कीमत में समन्वय किया जाता है । इस प्रकार काश्तकारों को खाद बेच कर साढ़े सात करोड़ रुपये का मुनाफा कमाया जाता है । लेकिन इस के मुकाबले में शहर में दूध बेच कर सरकार घाटा सहती है । हमारी सरकार पांच लाख रुपये का घाटा सह कर शहर में, दिल्ली में छोटे और बड़े आदमियों को दूध पिलाती है, जब कि वह देहात में काश्तकारों को खाद बेच कर साढ़े सात करोड़ रुपये का मुनाफा कमाती है । हम भी वह दूध पीते हैं, लेकिन प्रश्न तो यह है कि सरकार जनता के से पैसे शहर के लोगों को सस्ता दूध दही मुहैया करती है, लेकिन जहां उत्पादन किया जाता है, जहां अन्न पैदा होता है, वहां कुछ नहीं दिया जाता है यह समन्वय ठीक नहीं है ।

मैं निवेदन करना चाहता हूं कि खाद बेच कर साढ़े सात करोड़ रुपये का जब मुनाफा सरकार काश्तकारों से कमाती है उस को वह न ले और खाद को सस्ता कर दे ताकि अधिक अन्न पदा हो । आज बहुत से काश्तकार मंहगाई के कारण खाद नहीं इस्तेमाल करते हैं और सल्फेट आफ एमोनिया नहीं ले पाते हैं क्योंकि सरकार उन के साथ व्यवसाय करती है । अगर सरकार इस मुनाफे को कम करे और बाहर से ज्यादा खाद मंगा कर काश्तकारों को दे तो इस से बहुत लाभ होगा और काश्तकारों में बहुत उत्साह पैदा होगा ।

जब से पाटिल साहब आए हैं, उन्हों ने कई बार कहा है कि हम ने गल्ले की कीमत निर्धारित करनी है और निर्धारित होनी चाहिए, ताकि काश्तकार अपनी फसल का समन्वय कर सके, यह निश्चय कर सके कि वह कितना ऊख बोए, कितना गहूं और कितना धान बोए । किसी समय ऊख की कीमत है, यह समझ कर वह ऊख बोता है । पार साल सरकार के एक एक्ट के मुताबिक काश्तकारों ने गन्ना नहीं बोया । लेकिन आज धान की कीमत नहीं है । माननीय मंत्री ने इसी सदन में यह एनाउन्समेंट की थी कि जब धान की कीमत दस रुपये से कम होगी तो हम उस को खरीदेंगे । गोरखपुर और बस्ती में जिले में ७ रुपय से भी कम कीमत हुई, लेकिन फिर भी सरकार ने नहीं खरीदा । आज करीब आठ और नौ रुपये का भाव है । मैं जानना चाहता हूं कि सरकार कितना धान खरीद रही है । बहुत से लोगों के घरों में धान पड़ा हुआ है । और सस्ते के मारे वे बेच नहीं पा रहे हैं । अमरीका से अन्न मंगाने पर आप जो रुपया खर्च करते हैं, वह रुपया आप हमें दें, हमारा जो उत्पादित माल है, उस को ठीक भावों पर खरीदें, तम आप देखें कि किस तरह से उत्पादन में वृद्धि होती है । आप की स्कीम है कि अगर भाव नीचे जाते हैं, तो गवर्नमेंट उस को खरीद ले । पता नहीं स्टेट गवर्नमेंट क्यों नहीं खरीदती है । आप वहां को स्टेट असेम्बली की प्रोसीडिंग्स मंगा कर देख ले, आप को पता चलेगा कि सात रुपय धान का भाव है, और खरीद नहीं की जा रही है अगर आप ज्यादा से ज्यादा गल्ला अधिक से अधिक दाम दे कर खरीदें तो उत्पादन कैसे बढ़ता है, यह आप को पता चल जाएगा । मूल्य निर्धारण की बात भी है, कमेटियां बनाने की अगर बात है, तो वे तो बनती ही रहती हैं और कभी निर्णय नहीं हो पाता है । कब कमेटी बनेगी और कब निर्णय होगा ।

आप ने कहा है कि गेहूं हम तेरह रुपये मन के हिसाब से खरीदेंगे और इस से भाव नीचे नहींजाने दिये जायेंगे । बड़ी मेहरबानी आप ने की जो यह आश्वासन दे दिया । इस की कबिनेट ने भी मंजूरी दी । हम काश्तकारों को तो आप बारह और ग्यारह रुपये देते हैं, लेकिन अमरीका से जो आप मंगाते हैं, वह बीस रुपये के हिसाब से मंगाते हैं, बीस रुपये के हिसाब से इम्पोर्ट करते हैं । हमें आप

[श्री सिंहासन सिंह]

सोलह भी देने के लिये तैयार नहीं हैं। सोलह रुपये कोई ज्यादा नहीं है। आप हिसाब लगा कर देख सकते हैं। आप ने राजस्थान में तीस हजार एकड़ का फार्म बनाया हुआ है, वहां पर जो आपका खर्चा पड़ता है, उसको आप देख लें, और उसी के हिसाब से हमें भी दाम दे दें। उस से आप को पता चल जाएगा क्या कास्ट पैदा करने की पड़ती है।

पार साल एक विधेयक आया था, शूगर के लिए कि दस परसेंट शूगर की खेती की खरीदने की जिम्मेदारी सरकार लेती है, दस परसेंट चीनी पैदा की जाए, इस की जिम्मेदारी भी आप ने ली। अन्त तक मिलें चली। मगर काश्तकार की खातिर जो जिम्मेदारी सरकार ने ली थी उस को उस ने निभाया नहीं। इस का नतीजा यह हुआ कि काश्तकार में बदअमनी फली। सरकार ने कहना शुरु कर दिया गुड़ पेरो, गुड़ पेरो, गुड़ बनाओ, गुड़ बनाओ और गुड़ पर कुछ देने की बात भी होने लगी। इस से और भी झंझट खड़ा हुआ। दस परसेंट आप ने कम किया और २५ परसेंट काश्तकार ने कम किया। आप में उत्साह नहीं रहा, भगवान का उत्साह भी कम हुआ और पैदावार भी २५ परसेन्ट कम हुई। मैं आप को बताना चाहता हूं कि बड़े बड़े काश्तकार गोरखपुर में जो इस ईख पर मुनहसिर रहते थे, आज घबराये हुए हैं। आज बड़े बड़े खतों में २०० और १५० मन से अधिक फसल नहीं हुई है। हमारे पास के एक काश्तकार ने हमें बताया कि तीन बीघा उस ने बीज के लिये फसल को खड़े रखा है और जो बाकी चार बीघ में कुल चार डनलप गाड़ी ही ईख हुई है। एक तरफ आप ने मारा और दूसरी तरफ उस को भगवान ने मारा। आज उस की दुर्गति हो रही है। मैं चाहता हूं कि आप दूरदर्शिता की नीति बनायें। कभी आप ने कहना शुरु किया कि चीनी कम पैदा करो और कभी कहना शुरु कर देते हैं कि चीनी अधिक पैदा करो। किसी सिस्टमैटिक पालिसी पर तो आप चलें।

आप ने चीनी के भाव रिकवरी पर मुनहसर कर दिए हैं। आप के पास इस के आंकड़े होंगे मेरे पास नहीं हैं। उन को आप देख सकते हैं। आप उन से जान सकते हैं कि कितना काश्तकार की जेब में पैसा इस के फलस्वरुप गया है और कितना मिल मालिक की जेब में गया है। मिल मालिक को अगर इस से फायदा हुआ तो यह उस की अनअर्न्ड इनका है, इस को प्राफिट नहीं कहा जा सकता है। वह हमारा पैसा है। एक रुपया दस आने काश्तकार को देने की बात थी। उतना पैसा उन को अगर नहीं मिला है और इस से दो या तीन पैसे कम मिले हैं तो यह मिलवालों का मुनाफा है जो कि अनअर्न्ड है, बिला मेहनत के है। अगर काश्तकार को एक दो पैसे अधिक मिले हैं तो उस ने उस पैसे को वार फंड में दे दिया है। वहां पर सोसाइटीज ने यह पास किया था कि एक रुपया दस आने से अधिक मिलें तो उस को वार फंड में दे दिया जाए। उन्हों ने तो वह सारा पैसा वार फंड में दे दिया है, एक पैसा भी अपने पास नहीं रखा है, लेकिन मिल मालिकों की यह जो अनअर्न्ड इनकम है, इसका कितना हिस्सा उन्हों ने वार फंड में दिया है, इस को भी आप देख लें। उन्हों न नहीं दिया है। इस लड़ाई के जमाने में वे इस तरह से अनअर्न्ड इनकम करें और इस को फंड में न दें, या हर्ज न दें यह कहां तक मुनासिब है। मैं चाहता हूं कि आप इस को रिकवरी पर मुनहसर न करें, बल्कि भाव मुकर्रर कर दें। बिहार और उत्तर प्रदेश सरकार, दोनों ने आप से बार बार अनुरोध किया हैं, कि आप ने जो भाव भी तय करना है, एक रुपया दस आना या बारह आना, उस को तय कर दें। रिकवरी पर करने से मामला गड़बड़ा जाता है। पार साल भी कहा गया था कि एक रुपया दस आना देंगे। मैं आप को बतलाना चाहता हूं कि हमारे गोरखपुर में जो मिले हैं, वे काफी अच्छी हालत में हैं, और वे चलने वाली हैं।

रिक्वरी के बारे में आप ने पैकेज स्कीम बनाई है । पता नहीं आप किन एरियाज में इन स्कीम्ज को चलाते हैं ? क्या जहां ज्यादा से ज्यादा मिलें हैं, उन में चलाते हैं या दूसरों में चलाते हैं । अरली केन और पिछली केन का भी जिक्र आता है । अरली केन के बारे में भी कोई खास पालिसी नहीं है । कुछ दिन पहले मिल वाले अरली केन के बारे में कहते थे कि दो आने या एक आना अधिक देंगे । वह भी अब बन्द हो गया है । मिल वाले अब नहीं देते हैं । कोई भी प्रोत्साहन किसी किस्म का नहीं मिलता है ।

उपाध्यक्ष महोदय : अब आप खत्म करें ।

श्री सिंहासन सिंह : जब आप कह रहे हैं, तो मैं खत्म किए देता हूं ।

श्री काशी राम गुप्त (अलवर) : उपाध्यक्ष महोदय, हमारे कृषि मंत्री जी किसान वर्ग से आते हैं और हमारे राज्य-मंत्री महोदय किसान के डाक्टर हैं । हम आशा करते थे कि ये दोनों महानुभाव मिल कर के इस अन्न की समस्या को, इस खेती की समस्या को, बहुत तेजी से सुलझा देंगे । किन्तु पता नहीं गाड़ी यों धीरे धीरे चल रही है । पता नहीं क्यों समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है । रोग का निदान ही नहीं हो पाता है । पता नहीं उपचार के रास्ते में कौन सी रुकावटें आ रही हैं । यह भी कहा गया है कि रोग बढ़ता जा रहा है । लेकिन मैं कहना चाहता हूं कि इलाज जो करने वाले हैं उनकी तादाद भी तो बढ़ी है । उनकी कार्यकुशलता की परीक्षा होने जा रही है ।

इस मंत्रालय में १०९ करोड़ रुपये के लगभग रुपया विभिन्न विभागों पर खर्च होता है । २७ करोड़ के लगभग रुपया सहायता के रूप में प्रदेश सरकारों को मिलता है और २५७ करोड़ रुपया अन्न भंडार कायम करने के लिए अन्न इकट्ठा करने के लिए इस वर्ष के लिए रखा जाता है । इन अन्न भंडारों की समस्या कब समाप्त होगी, अमरीका से गेहूं का आयात कब बन्द होगा, कुछ पता नहीं । यह बहुत ही चिन्ता का विषय है बना हुआ है । हमारे कृषि मंत्री जी कहते हैं कि अन्न भंडारों की योजना इसलिए चलाई जा रही है ताकि अन्न को सुरक्षित रखा जा सके और दाम अधिक न बढ़ें । किन्तु जो आंकड़े हैं, गतवर्ष की जो पैदावार है, उस में उससे पिछले वर्ष की अपेक्षा पैदावार कम हुई है । आप कह सकते हैं कि बहुत से कारण इसके हो सकते हैं । मानसून फेल हो गया और बाढ़ें आ गईं, किन्तु यह तो खेती के मामले में होता ही रहता है । क्या योजना के अन्तर्गत इन बातों का समावेश नहीं होता है । यदि होता है तो यह दलील देने से कोई लाभ नहीं हो सकता है ।

जो हमारी स्कीम होती हैं, उस में कितना ही घोटाला होता है । इसी रिपोर्ट में १९६२-६३ की रिपोर्ट में पृष्ठ १८ पर लिखा है कि ६६०० टन अनाज डैमेज हो गया है और १२,३०० टन सब-स्टैंडर्ड था । अब सब-स्टैंडर्ड का क्या अर्थ है यह मैं समझ नहीं पाया हूं । इसको बाजार में बचा गया, ऐसा कहा गया है । लेकिन यह नहीं बताया गया है कि इस से कितनी हानि हुई है, इसको क्यों बेचना पड़ा है और अगर यह खाने के लायक नहीं था, तो जिन्होंने इसको खरीदा है, उन्होंने इसका क्या किया है । यदि यह खाने लायक था तो फिर नुक्सान उठाने का प्रश्न क्यों पैदा हुआ । मैं निवेदन करूंगा कि इस तरह की सारी जानकारी इस रिपोर्ट से मिल जानी चाहिये थी । लेकिन ऐसा नहीं हो सका है । इस तरह की अधूरी रिपोर्ट देने से कोई लाभ नहीं होता है । वस्तु स्थिति का ज्ञान प्राप्त करने के लिये यह जरूरी है कि पूरी डिटेल्ज दी जाएं ।

कृषि फार्म भी बनाये गए हैं । सूरतगढ़ फार्म इसी तरह का एक फार्म है । करोड़ों रुपया उस पर लगा है । उसका अभिप्राय यह है कि लोगों को बीज दिया जाए और जो

[श्री काशी राम गुप्त]

फालतू अनाज हो, उसको बेचा जाए। मैं निवेदन करना चाहता हूं कि इन फार्म्स से साधारण किसानों को क्या लाभ होने वाले हैं, इस पर रोशनी डाली जानी चाहिये । अभी तक किसान इन के बारे में कुछ भी नहीं समझ पाया है। अगर उसको वहां का बीज हमेशा के लिए लेने का आदि बनाना है, तो मैं समझता हूं कि उसका कोई उपयोग नहीं होगा । प्रायः देखा जाता है कि जो बीज उनको मिलता है वह समय पर नहीं मिलता है। राज्य के अन्दर ही बीज होते हुए भी अगर उसको समय पर न मिले तो उसका क्या लाभ हो सकता है । राजस्थान में फार्म होते हुए भी राजस्थान के लोगों को समय पर बीज न मिले तो फिर बीज देने का क्या लाभ है । ग्राम में बीज भंडार बनाने की बात है । किन्तु उन में सफलता न के बराबर ही मिली है ।

यहां पर बहुत चर्चा हो रही है दिल्ली की दुग्ध योजना की। २०८ लाख रुपया इस योजना में अभी तक लगाया जा चुका है और प्रति वर्ष इस में ५ लाख रु० का घाटा होता है । इतनी बड़ी योजना बनी, उस में घाटा ही रहा, फिर भी वह पूरा दूध नहीं दे सकी। इस वर्ष यह लिखा गया है कि ४५०० मन दूध मिल सकेगा, लेकिन जो इस में ७००० मन के आंकड़े के बारे में लिखा है कि उस को प्राप्त करना, है, वह अभी बहुत दूर है, और १२,००० टन वाली बात तो स्वप्न जैसी है ही। फिर भी देखने में आता है कि दूध पूरा नहीं बिकता । जो भी बिकने से रह जाता है उसी से यह घी बनता है और जो कि लोगों को और इस सदन के सदस्यों को मिलता है। यदि अभी वह दूध पूरा नहीं बिकता तो जो इस में ७,००० मन करने की योजना है उस का क्या असर होगा। वह आखिर पूरा क्यों नहीं बिकता ? क्या कारण है उस के न बिकने का जब कि गांव से ज्यादा से ज्यादा सप्लाई आ गई है ? यह एक ऐसी बात है कि जो रोजमर्रा के जीवन में आ गई है । इस दुग्ध योजना में क्या क्या कमियां हैं, किस प्रकार से लोग क्यू में खड़े होकर परेशान होते हैं और जो दूध देने के जिम्मेदार होते हैं किस प्रकार समय से नहीं आते हैं, यह सब तो लम्बी चौड़ी चर्चा हो जाती है । हमारे साथी तो कहते हैं कि शहर वालों के लिये दूध का प्रबन्ध करने के लिये यह सब हो रहा है। लेकिन मैं यह नहीं मानता क्योंकि वह दूध तो गांवों से ही आता है । मगर गांव वाले जो हैं उन को उस का पैसा कैसे मिलता है, इस को देखने का प्रश्न है । अभी तक कहा जाता है कि दिल्ली के नजदीक के क्षेत्रों से यहां दूध लायेंगे, किन्तु पिछली बार जब इस सदन में प्रश्न आया तो बतलाया गया कि बीकानेर के इलाके से भी दूध आने लगा है । इतनी दूर से दूध क्यों आने लगा इस के लिये कहा गया कि चूंकि वहां सस्ता मिलता है । यदि इस प्रकार से व्यापारिक विभाग के आधार पर दूध लिया जाता है तो उस दूध का पैसा तो कम से कम किसानों को पूरा मिलना चाहिये जिस से कि वह इस दूध को दे कर अपनी आमदनी बढ़ा सकें । मैं समझता हूं कि इस वक्त जो दूध लिया जा रहा है वह इस दृष्टि से लिया जा रहा है कि यहां पर जो लोग दूध सप्लाई करते हैं उस से यह कुछ सस्ता हो जाय और गांव वालों को उसका उचित पैसा मिले या नहीं, उन के दूध का यह आधार इस योजना का नहीं है । इस लिये इस योजना का आधार भी बदलना ही चाहिये ।

इस के अतिरिक्त देश में जो बड़ी बड़ी सिंचाई योजनायें हैं उन में भी यह प्रश्न हो रहा है कि उन का जो पानी है वह फालतू पड़ा हुआ है और उसका उपयोग नहीं हो रहा है। यह दशा चल रही है। किन्तु जो छोटी सिंचाई योजनायें हैं; खास तौर से मैं उन क्षेत्रों के लिये निवेदन करना चाहता हूं जहां के लिये कहा जाता है कि कुंओं या ट्यूब वेल की आवश्यकता है, जो छोटे बांध हैं उन क्षेत्रों की योजनायें जो

हैं उन का कोई आधार ऐसा बना हुआ नहीं है जिस से सब को सुविधा मिल सके। अभी अभी बहुत से सज्जन कह रहे थे कि सिंचाई विभाग अलग है और कृषि विभाग अलग है। आश्चर्य यह है कि कुएं तो इस मंत्रालय के अधीन हैं और बांध दूसरे मंत्रालय के अधीन हैं। मैं निवेदन करूं कि मैं ने एक ऐसा गांव देखा है जहां पहले से कुएं बने हुए थे। उस मंत्रालय से रुपया ले लिया गया और एक छोटा सा बांध उस गांव में बांध दिया। उस बांध के अन्तर्गत गांव के जो कुएं थे वह भी आ गये और सिंचाई के साधन के रूप में समाप्त हो कर वे बिजली के साधन बने। उसके बाद कुएं के विभाग वालों को कुएं के लिये रुपये मिले तो उन्होंने ले लिये और गांव के दूसरे हिस्से में कुएं बनाने शुरू कर दिये। एक तरफ इस तरह से रुपया बरबाद कर दिया गया और दूसरी तरफ पहले वाले कुंओं को बरबाद कर दिया गया और दूसरे कुएं बनाने की बात कही गई। यह कौन सा योजना का तरीका है ? मैं कहूंगा कि योजना में जिन बातों का सम्बन्ध होता है यदि उन सब का समावेश नहीं किया जाता है तो उस से बहुत बरबादी होती है।

मैं एक गांव में गया। वहां कुएं बने हुए हैं। पांच कुएं तो बिल्कुल खाली पड़े हुए हैं, उन पर काम नहीं हो रहा है। जानकारी की तो मालूम हुआ कि उन के जो मालिक हैं वह एक एक आदमी हैं। उन से सिंचाई नहीं कर सकते क्योंकि बिजली नहीं है उसके पास। उन को डर हो गया है कि जो हमारे नये कुएं बने हैं उन में अगर किसी को साथी बना लिया तो जमीन जाने का खतरा है। उन की किसी कदर स्थिति ऐसी बन गई है। यद्यपि कोई विशेष डर की बात उस में नहीं थी, लेकिन उन का डर नहीं निकलता है। नतीजा यह हुआ कि वहां पर बारानी अर्थात् बिना सिंचाई की फसल हुई। मैं ने हिसाब लगाया कि यदि बाकी पांच कुंओं से भी पूरी खेती होती तो हमें एक हजार मन ज्यादा अनाज मिलता। जब एक गांव की स्थिति यह हो जाती है तो हमारी योजना की स्थिति कैसी स्थिति है ?

इस के बाद आप किसानों को रुपये देने का ढंग देखिये। किसान रुपया लेता है, उस को पूरी तरह से ऋण के रूप में दिया जाता है और उसे वापस लिया जाता है, चाहे कितना ही उसका घाटा हो जाय। बहुत से गांव ऐसे होते हैं जहां का पानी ऐसा निकलता है जो खेती के लायक नहीं होता। बहुत से कुएं ऐसे होते हैं जिनका पानी ऐसा होता है जिन से सिंचाई नहीं हो सकती। यदि यह स्थिति हो तो किसान को कुछ राहत मिलनी चाहिये। गांवों के बारे में आधार दूसरा होना चाहिये। जो सिंचाई योजनायें हैं उन के दो भाग होने चाहियें। जो नहर योजनायें हैं वह अलग होनी चाहियें और जो ट्यूबवेल अथवा कुंओं की योजनायें हैं वह अलग होनी चाहियें और इस के आधार पर ग्राम योजना होनी चाहिये। खास तौर से देखना चाहिये कि विशेष क्षेत्र में जो क्रॉप पैटर्न है वह किस तरह का है। जहां सरसों पैदा होती है वहां यह हालत हो गई है कि लोग कुंओं पर सरसों की खेती करने लगे क्योंकि वह सस्ती पड़ती है। यदि आप को पैदावार तेजी से बढ़ानी है और थोड़े खेत में बढ़ानी है साथ ही उस के जल्दी नतीजे निकालने हैं तो कुंओं को गांवों को आप को बढ़ावा देना होगा और साथ ही साथ उन क्षेत्रों में बिजली भी लानी होगी। जब तक बिजली उन क्षेत्रों में नहीं जायेगी तब तक उनकी पैदावार नहीं बढ़ सकती है। आज स्थिति यह है कि मेरे जिले के बराबर में जहां बिजली पहुंच गई है वहां नतीजा यह हुआ है कि उस इलाके के लोग जहां बिजली नहीं पहुंची है कुंओं को छोड़ चुके हैं क्योंकि वह उनके लिये सस्ता नहीं पड़ता।

आज बिजली दूसरे विभाग के हाथ में है और इरिगेशन दूसरे विभाग के हाथ में है। कुएं आप के हाथ में हैं या कम्युनिटी प्रोजेक्ट्स के हाथ में है। मैं निवेदन करता

[श्री काशी राम गुप्त]

हूं कि जन संख्या का जो प्रश्न है यह बहुत टेढ़ा प्रश्न है और इस का संबंध हमारे उत्पादन की योजनाओं से । मगर आज यह विषय हेल्थ मिनिस्टर के हाथ में है। मैं नहीं समझ पाता कि यह क्यों है। वैसे तो विभिन्न मंत्रालयों में कोई भेदाभाव ज्यादा नहीं है, मगर चाहिये यह कि यह मंत्रालय इस बात को देखे कि यहां पर जन संख्या की कितनी बढ़ोतरी हो रही है और उस के हिसाब से पैदावार उस क्षेत्र में हो रही है या नहीं । जब तक जिले को इकाई नहीं बनाया जायेगा, जब तक हर जिले के आधार पर योजना नहीं बनेगी और वह योजना ग्रामीण आधार पर नहीं चलेगी, जब तक यह नहीं देखा जायेगा कि कहां बिजली पहुंचनी है, कहां पर कुंयें बनने हैं, तब तक यह कार्य सफल नहीं हो सकेगा । और हम दिन प्रति दिन समस्याओं को उलझाते चले जायेंगे ।

एक बात मैं और निवेदन करूंगा । डिमाक्रेटिक डिसेंट्रलाइजेशन के बारे में सरकार कहती है कि हम विकास करने के लिये यह पंचायती राज लाये हैं । परन्तु अनुभव यह कहता है कि यह पंचायती राज विकास कार्य के लिये नहीं लाया गया है बल्कि विकास कार्य को रोकने के लिये लाया गया है। जितने चुनाव होते हैं वे राजनीतिक दलों के आधार पर होने शुरू हो गये हैं। विकास के कार्यो में कहीं राजनीति आती नहीं है, वहां पर कुंओं की बात होगी, बीज की बात होगी, पानी की बात होगी, या फसल की बात होगी । उस में न कांग्रेस की बात होगी न स्वतंत्र पार्टी की, न कम्युनिस्ट पार्टी की और न जनसंघ की । किन्तु हालत ऐसी हो रही है कि जहां कहीं चुनाव आयेंगे, सब लोग वहां देखेंगे कि राजनीति आ जायेगी । अभी गुजरात में चुनाव हो रहे है और यहां पर गुजरात के सदस्य कह रहे हैं कि हमें समय नहीं है क्योंकि हमारे यहां चुनाव हो रहे हैं।

एक माननीय सदस्य : हम यहां बैठे हैं।

श्री काशी राम गुप्त : वहां पर आप के दूसरे रिप्रेजेन्टेटिव चले जायेंगे । आप ने वहां पर अपने रिप्रेजेन्टेटिव बना रखे हैं, मुझे मालूम है। इसलिये आप यहां पर बेफिक्री से बैठे हैं । यदि यह स्थिति रही तो हमारे सारे विकास के कार्य रुक जायेंगे, उत्पादन घट जायेगा क्योंकि जो लोग चुनाव में आते हैं उन का सुबह से शाम तक यह सोचने का काम होता है कि वे कैसे बने रहें और दूसरों का काम होता है कि वे यह सोचें कि वे उन को कैसे हटा दें । इस घुड़दौड़ में वे लगे रहते हैं। यह बहुत ही खतरनाक चीज है । इसे आज हमारे राजनैतिक दल के सदस्य महसूस नहीं करते हैं कि यह कितना दुःखदायी कार्य है । वे इस के राजनैतिक रूप को जितनी जल्दी समाप्त कर देंगे उतना ही अच्छा होगा । एक साहब कहते हैं कि यह चुनाव प्रथा के अन्दर कैसे सम्भव है। बहुत आसानी से सम्भव है । इस सदन के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष चाहे किसी भी पार्टी के हों वे चुनाव के बाद किसी पार्टी के नहीं रहते तब प्रधान, उपप्रधान और जो जिला प्रमुख हैं उन्हें पार्टी से सम्बन्धित न होने की घोषणा करने में क्या मुश्किल बात है ? किन्तु मेरा तजुर्बा यह है कि यह सब जो कुछ है वह पावर पालिटिक्स के कारण है, अपने लिये शक्ति को बढ़ाना है, इसलिये सारी खराबी हो रही है ।

यहां सहकारी खेती के बारे में भी कहा गया । इस सहकारी खेती से सिद्धान्ततः मुझे कोई विरोध नहीं, किन्तु जब इस को अमल में देखा तो मुझे बहुत अच्छी नहीं लगी । कुछ महीने पहले हमारी एक टीम मैसूर राज्य में गई थी । वहां जा कर हम ने जो कुछ देखा उस से मुझे बड़ी निराशा हुई । हमारे सहकार मंत्री कहते हैं कि बहुत जगहों पर इस की बड़ी तरक्की हो रही है । मैंने उन से निवेदन कि

हमें वह जगह दिखलाई होती जहां पर तरक्की हो रही है। हमें ऐसी जगह क्यों भेज दिया जहां कोई तरक्की नहीं हो रही थी। तो मेरा निवेदन है कि सहकारी विभाग अलग सहकारी खेती की बात करता है, कृषि विभाग अलग उसकी बात करता है पर दोनों में सामंजस्य नहीं है। इस में क्या कठिनाइयां हैं जब तक उनको मिल कर नहीं देखा जाएगा तब तक सहकारी खेती कभी सफल नहीं हो सकती। आज जो हो रहा है उसका तो न होना अच्छा है। इससे तो किसान के दिमाग पर बुरा असर पड़ता है, वह सोचता है कि किस जाल में उसको फंसाया जा रहा है। वास्तविकता तो उसके सामने नहीं आती। इसलिये मेरा निवेदन है कि सहकारी खेती के प्रश्न में बड़ी गहराई में जाना चाहिये। कुछ चुनी हुई जगहों पर इसका प्रयोग करना चाहिये और इसमें जो समस्याएं आती हैं उनका निराकरण करके उसका तजुर्बा करना चाहिये। इस प्रकार से काम नहीं चल सकता कि आपने कह दिया कि इतना रुपया हम दे रहे हैं, एक सोसाइटी बना लो। सोसाइटी फरजी बन जाती है और लोग अपने कुटम्ब वालों के नाम उसमें लिखा देते हैं और इस प्रकार रुपया ले लेते हैं पर काम कुछ नहीं होता। इसी कारण देश में इसका विरोध होता है। अगर यही नीति चली तो सहकारी खेती निकम्मी साबित होने वाली है।

अन्त में मैं यह निवेदन करूं कि यह जो रिसर्च के लिए अफसरों की फौज है इसका किसान से कोई सम्बन्ध नहीं है। किसान का सम्बन्ध प्रदेश सरकार से है और प्रदेश सरकार के काम की जवाबदारी आप लेते नहीं। प्रदेश सरकार अगर किसानों को खाद देती है तो उसमें राजनीति चलाती है, वे देखते हैं कि यह आदमी हमारी पार्टी का नहीं है इसको खाद नहीं देंगे या और चीज नहीं देंगे। वहां गुटबन्दी चलती है। अगर आप इस चीज पर नियंत्रण नहीं करेंगे तो तरक्की नहीं हो सकती। अब कहा जाता है कि एक टीम यहां से जाएगी और देखेगी कि उत्पादन क्यों नहीं बढ़ रहा है। प्लानिंग कंसलटेटिव कमेटी में यह प्रश्न आया और उस पर गहराई से विचार किया गया कि किस प्रकार उत्पादन बढ़े। यह तो स्पष्ट है कि हमारा अन्न का उत्पादन नहीं बढ़ रहा है और उसमें हम असफल हैं। इसमें कैसे जल्दी सफलता मिले यह प्रश्न विचाराधीन है। इसलिये मेरा निवेदन है कि इस प्रश्न पर पूर्णतया विचार करके तेजी से ऐसे कदम उठाने चाहियें ताकि हमको इसमें सफलता मिले।

अन्त में मैं आपको धन्यवाद देता हूं कि आपने मुझे बोलने का मौका दिया।

The Deputy Minister in the Ministry of Food and Agriculture (Shri A. M. Thomas): Mr. Deputy-Speaker, it has been my happy lot when I intervened in the debate on this Ministry in the last three years to report to this hon. House a comfortable food situation. It is my good fortune again in the fourth year in succession to report that the food situation in this country is very comfortable.

Shri Kashi Ram Gupta: Production is going down. Still comfortable?

Shri A. M. Thomas: I am coming to production also.

I am gratefull to my hon. friend, Shri Inder J. Malhotra, for paying a compliment to the Food Ministry on the excellent situation we find in the food front. We have passed through anxious times but in the last three or four years as far as the food situation in the ocuntry is concerned, we have not been having very many troublesome periods. When I intervened in the debate in 1959-60, I said there is no tension now on the food front. The next year I stated that the Food Ministry has been able to inspire confidence in the public

[Shri A. M. Thomas]

with regard to the food situation. The third year I said that the Ministry has been able to sustain that confidence.

As far as the food situation is concerned, as the hon. House is aware the most testing time came in the wake of the emergency, with the proclamation of emergency because of the Chinese invasion, on the 26th October 1962, and we have been able to maintain adequate foodgrain supplies and relative stability in foodgrain prices. Maintenance of adequate foodgrain supplies and relative stability in foodgrain prices is important even in normal times especially in the context of our planned development; it assumes added significance in the context of the present emergency. As everybody knows, the food front is next in importance only to the defence front. I do not want the Food Ministry to take all the credit. But it can legitimately claim credit. Whenever any emergency of this type occurs, when wars break out, the tendency has always been for foodgrain prices to rise. Even when there were wars, not in this country but outside, even when there was the Korean war, our foodgrain prices shot up. We should pay our tribute to the trade and the public at large who have responded so magnificently to this emergency, and there has been an absence of any significant upsurge in speculative tendencies, and there has been consequent reduction in the pressure on prices.

With regard to the various activities of both the Departments of Food as well as of Agriculture, we have this year tried in our administration reports to be as informative as possible. I think hon. Members are satisfied, by and large, with the information given of our various activities in the reports.

The main contributory factor to stability in prices is, of course, the size of internal production. Many Members referred to the question of our imports. I was surprised to find Shri B. K. Das, coming from West Bengal, also referring to it, saying that it is not at all desirable to have imports of this size. I wonder what would have been the situation in West Bengal had we not had these imports and had we not distributed liberally through their 11,000 fair price shops wheat and rice according to the requirements of West Bengal.

Shri B. K. Das: He has wrongly understood me.

Shri A. M. Thomas: The revised target of food production—which would of course, be dealt with in more detail by my hon. colleagues—has been reached in 1960-61 with a production of 79·7 million—roughly 80 million—tons. It has been 5 million tons more production than in the previous year. I mention this fact because several hon. Members have referred to our agricultural production having remained rather stationary in recent years. Of course, in 1961-62, this progress has not been kept up. All the same, in spite of natural calamities, we have been able to maintain more or less figure that we attained in 1960-61. For 1962-63, final estimates are not available. On the basis of preliminary estimates, the production of rice in MP, UP, Orissa and West Bengal this year will be lower than that of last year. Prospects of other khariff grains are good. Rabi sowings have been under favourable conditions and a good crop is expected.

Hon. Members would have noted from the figures given in the administration report that we are making considerable progress in wheat production. The rice crop in the southern States has been better. The overall position, in spite of natural calamities again in 1962-63; is kept up. According to preliminary estimates, we would be keeping up the production level we attained in the last two years per-

haps because of better performance with regard to coarse grains, that is, khariff cereals other than rice. We may perhaps be in a better position with regard to the overall agicultural production in the matter of foodgrains. But it is too early to give any firm figure with regard to the size of our production for 1962-63 because final estimates have yet to be made.

Complaints have been raised by one or two Members with regard to the fall in the prices of wheat. Yes, wheat prices in this country have recorded a significant fall since November, 1962. During the period November 1962 to January 1963, the index number of wholesale prices of wheat went below last year's level by a considerable margin. In February, 1963 the index number was 89 as compared to 100 during the corresponding period of last year. It is significant that the wheat prices have been showing a downward trend even during the off season, perhaps in anticipation of a very good wheat production performance. But I read in today's papers that there is a little firming tendency in wheat prices. If that is so, it is certainly a welcome trend.

As far as the rice position is concerned, prices were higher in 1962 than in 1961 mainly in the eastern States of West Bengal, Orissa, Bihar and Assam, but in other States like Maharashtra, U.P., and Madhya Pradesh, the prices were lower than or at about the same level as in the previous year. The comfortable rice position in the latter group of States and other States in the South has been due to an increase in production in 1961-62 compared to 1960-61, accompanied by larger market arrivals. The all-India index for rice prices in 1962 remained somewhat higher than in 1961. In February, 1963, the index number for rice was 108 compared to 102 during the same period in 1962.

This rise is mainly due to the fact of higher prices mainly in the States of Orissa and West Bengal and we realise that a little more attention would perhaps be necessary in the coming year as far as these States in the eastern zone are concerned, so that we would be in a position to meet all their legitimate requirements. As far as the South is concerned, prices are at a very reasonable level. In fact, the agriculturists complain that the present price level is not even remunerative. So, since in the rest of the country prices are at a reasonable level, we would be in a position to concentrate more attention on the eastern States of Orissa, West Bengal and Assam. So, hon. Members coming from those States need not have any apprehension that the price level in those areas would be unduly disturbed in the coming year.

As far as foodgrains production is concerned, we must bear in mind the fact that coarse grains form a substantial portion of the cereals consumed in this country. They come to about 33 per cent of the total production of cereals in this country.

So, if the cereals position is satisfactory, if the availability of coarse grains is adequate, it will have a necessary impact on the price of both wheat and rice. For example, in the State of Mysore, if the production of ragi is satisfactory, the common people would not mind if the prices of wheat or rice rise to a certain extent. Similarly, in Central India if the production of jowar is satisfactory, the common people would be quite satisfied. (*Interruption*). My hon. friend must know better how to pronounce jowar because he comes from a jowar-eating area, while I come from a rice-eating area.

Although no firm production figure of jowar is available yet, it is expected that production this year will be about 9 million tons against 7·7 million tons last year. This increase in production has helped us in bringing down not only the price of jowar to a reasonable level, but also indirectly exercising a salutary effect on the price of wheat which, even during the present off-season, is showing an easy tendency.

[Shri A. M. Thomas]

Criticism has been levelled against the volume of our imports. If we calculate the per capita availability in this country of foodgrains out of indigenous production and out of imports, I find the figures are 15 oz. from indigenous production and only 0:8 oz. from imports for the year 1962, so that as far as availability is concerned, the imported grain forms only a very small percentage of the total requirements of this country. Even so, it plays a key role in the matter of maintenance of stability in the foodgrains market.

15.46 hrs.

[DR. SAROJINI MAHISHI *in the Chair*].

We should also bear in mind that these imports are mainly under P.L. 480 from the USA under the agreement signed by my senior colleague with the President of the USA in July, 1960. Under that we can import 16 million tons of wheat and one million tons of rice. Although it was signed in July, 1960, we have up till now imported only about 6 million tons of wheat and purchased about 6 lakh tons of rice, so that a substantial quantity still remains to be imported. Entering into this agreement and importing this quantity was not for current consumption alone. We have, as you know, a target to build up a buffer stock of 5 million tons. We We have not been able to build up a buffer stock of that size, but there has been general support from the House for that object, having regard to the vastness of this country and the fickle nature of the monsoon. It is very well known that in spite of the great progress made in agriculture in India, it is still a gamble on the monsoon. So, to provide for all eventualities, we want to build up such a stock.

As far as imports under P.L. 480 are concerned, the hon. House knows that there is no question of incurring foreign exchange. Not only that. We will get crores of rupees for our development plans also. We have to incur foreign exchange only for 50 per cent of the freight payable for import non-U.S. flag vessels.

When this agreement was entered into, we had also a liability to import by way of commercial purchase 4 lakh tons of wheat, but that has now been reduced to 2 lakh tons. So, we spend our foreign exchange only for the purpose of importing this small quantity of 2 lakh tons of wheat, and for importing some 1½ lakh tons of rice from Burma and some small quantity from UAR or some other country from which we may perhaps be in a position to import. So, foreign exchange on imports is not going to be a large figure. It has to be realised that the price level has been kept because of the impact of these imports also and our storage is now distributed throughout the length and breadth of the country so that we will be in a position to rush aid to any distressed area quickly.

I will now come to another subject relating to the Department of Food viz., the sugar situation which has been referred to by many hon. Members. It is easy to be wise after the event. Shri More devoted all his time to this subject and said that we were going to have a crisis of under-production. My hon. friend does not realise that about a year ago, hon. Members voiced their concern about facing the crisis of over production. We have also to realise why this ten per cent cut was resorted to. Our sugar production was 19·51 lakhs tons in 1958-59. Apart from the question of exports which we were not thinking about at that time, even to meet internal requirements, production had to be increased and some incentives were given. My senior colleague mentioned at that time that the idea was also to have at least 2·5 lakh tons more by way of reserve stocks by way of carry-over, which would meet inter-

nal requirements. Those incentives were very well received by this hon. House as we were then facing a shortage of sugar. The next year, production rose up to 24·82 lakh tons, an increase of about five lakh tons. The year after that it rose to 30.29 lakh tons and in 1961-62 we had necessarily had to do something in the matter of large production of sugar. With a carry-over of 1.2 million tons and production of 30 lakh tons in 1961-62, our internal consumption was estimated at 23 lakh tons. After estimating the production for that year, it was believed that there would be a carry over of 1·6 million tons from that year. There was a gap of Rs. 30 crores in the matter of finance, so much so, the Ministry had to use its good offices with the State Bank and other banks to advance more and more to the sugar industry, not only for the protection of the industry as would be the interpretation put by certain hon. Members. But without the necessary finances and without disposing of sugar, how would the cane-grower be paid? A very serious situation arose and the cane price arrears worked out to more than Rs. 10 crores in July 1961. Storage facility also fell short. There was almost a certainty of deterioration of stocks to the tune of 4·5 lakh tons, involving substantial loss. So that, unless the production was restricted—the prospects of exports were very dim at that time and the international prices were very low—there would have been further stagnation. It was then a question of incurring very heavy losses to the extent of even more than Rs. 5 crores. As I said before, Madam, it is always possible to be wise after the event. Then, we could never anticipate that the international prices would shoot up like anything; as disclosed from the London market, they have practically doubled in the last one year. We could not have expected such a contingency at that time when there was the regulation of production. Our idea was to restrict production to the extent of 28·87 lakh tons as against 30 lakh tons in the previous year. Because of poor yield and several other circumstances, the actual production came only to 27:14 lakh tons. But I may assure the House that this reduced production has not been because of this regulation at all, of this ten per cent reduction. Because in each and every case where any permission to crush additional cane was sought for, it was liberally given. When that Bill was discussed here, an assurance was given that not a single cane would be allowed to go dry in the fields and that promise was kept up. I admit that for the next year it might have had some effect—I mean the regulation. But I may say that it was not because of that alone that we are going to face the shortage of production this year. I do not know how the assessment made by Shri More would be helping the general public. It is still not possible to give any firm estimate of production. According to my information, the sugar industry itself has changed its estimates as many as five times in the course of the year. The production up to date exceeds 18 lakh tons. Half the number of factories are still working and the supplementary season is still to come. The season's production may certainly be higher than the estimate of the ultra-pessimists of the industry. As I said, I am not in a position to give any firm figure of production but at the same time I would say that we should not go by the figures of production-estimate that is now being given by the industry. Whatever it be, having regard to the carry-over of the stocks and the year's estimated production, we will certainly be in a position to meet our internal requirements as also fulfil our export commitments.

Shri Bibhuti Mishra said that he would be celebrating the day when in 1963-64 we produce 33 lakh tons, as has been stated by my senior colleague in this morning's informal consultative committee. He must be prepared to celebrate that day even now because when we bargained for 2·5 lakh tons of increase in the first year, we got more than 5 lakh tons and in the next year we got another six lakh tons

[Shri A. M. Thomas]

more. Shri Bibhuti Mishra need not be apprehensive about this.... (*Interruptions*).

Shri Bibhuti Mishra: I know it is not going to be a fact.....

Shri A. M. Thomas: Shri More has stated that as far as sugar export was concerned, it was an unscrutinised business. I think he is not adequately informed of the postion. In fact, it is certainly a 'scrutinised' business, because we have to pay the hard cash of the tax-payer to subsidise exports; the Government would certainly have to be satisfied about the prices and that no agency takes any undue advantage of these exports. The Indian Sugar Mills Association is an organisation of the sugar industry. Exports are canalised through this organisation under the Sugar (Export Promotion) Act of 1958. The export quotas are given to the factories pro-rata to the production. The Indian Sugar Mills Association collects the sugar and exports it. The factories all over the country receive a pool price which includes export realisations plus the subsidy given by the Government minus the expenses incurred on export such as railway freights, porterage, expenses of stevedoring, etc.

16 hrs.

It may also be realised that exports of sugar have begun to expand from last year. The State Trading Coporation of India is being progressively associated with export work. We have even made commitments; we have entered into long-term agreements with regard to the export, and the price that we would be realising is linked with the London daily price. So, there is no possibility of any avoidable loss as far as the exchequer is concerned, or any scope for any undue advantage as far as the industry is concerned.

When I said that as far as the production targets in the year 1963-64 is concerned we could legitimately hope to reach the target, I had also in mind the schemes which the Ministry has now in view for implementation as far as the development of sugarcane is concerned. The target, fixed in the third Plan, of sugarcane production is 100 million tons out of an acreage of five million acres. The production in the year 1961-62 was 960 lakh tons so that there need not be any anxiety at all that the targets would not be reached, that is, about 100 million tons. We really want to exceed the target to achieve higher production per acre. Sugarcane development schemes are to be adopted throughout the country. But our strategy now, as far as increased agricultural production is concerned, is to single out or take certain areas in which there is scope for intensive development. The example of Maharashtra was mentioned by Shri S. S. More and others. Of course, Maharashtra has achieved a very proud record, perhaps as far as some farms are concerned, and that is a record which would compare favourably with the world records of production. From a farm which is being managed by our Parliamentary Secretary, Shri Shinde, I got the report when I visited that farm that there is a production of 80 to 85 tons per acre of sugarcane and that is a 12-month crop. That is a record about which any cultivator or any agriculturist can feel proud. The average in Maharashtra is 40 to 45 tons, while the all-India average is only 16 tons now.

Shri Kashi Ram Gupta: There is one crop only in two years.

Shri A. M. Thomas: I said it is a one-year crop. It is not possible to compare the conditions in Maharashtra with the conditions in Uttar Pradesh. So, we want to adopt developmental measures in areas, especially in the States of Uttar Pradesh, Bihar and Punjab which are in a way a drag on the sugar industry. But, at the same time, we cannot afford to ignore that, because, still, 50 to 55 per cent

of the entire production is from the State of Uttar Pradesh. So, these States, as far as the sugar industry is concerned, occupy a prominent place and we have necessarily to increase the yields; and what are the steps that we have in view? Although it is desirable to undertake developmental measures in all the sugarcane areas, we want to achieve impressive results by selecting certain areas in North India where cane-yields have been very low. It is proposed that a co-ordinated pilot project on the model of the package programmes should be launched in certain selected districts of Uttar Pradesh, Bihar and Punjab to show to the farmers how the per-acre yield of sugarcane could be stepped up. We propose to have six pilot projects in these three States. In addition to the existing sugarcane development schemes in various States, and the proposed pilot projects in these three States on the lines of the package programmes, another scheme of intensive cultivation of sugarcane around the factory areas of Uttar Pradesh has been drawn up by the State Government. In this scheme it is proposed to concentrate intensive cane development activities in a block of 4,000 acres of cane on an average around each sugar factory. This scheme would cost about Rs. 1 crore annually and would be eligible for central subsidy of 33 1|3 per cent, the balance being met by the State Government and the beneficiaries equally. The hon. House would agree that this is a step in the right direction. The State Governments of Bihar, and Punjab have also been asked to formulate schemes on the lines of the Uttar Pradesh scheme and they have also been asked to set up seed nurseries and ensure adequate improved seeds to be supplied.

We are quite alive to the situation and we are taking all steps that are necessary for increasing the production of sugarcane and thereby the production of sugar also.

With regard to sugar prices about which some hon. Members have made observations, we have to realise that that entire cost structure was gone into by the Tariff Commission more than once: twice or thrice. 70 per cent of the cost is the price that we will have to pay on account of the ugarcane. You will have to take into account these factors when you look at tht present level of prices, and he present level of price has also to be judged from the fact that this time the season is going to be short and the cost of production would therefore be higher, and also the fact that because of the additional burden on account of the award of the Wage Board, the sugar industry has to pay much more towards labour.

From the figures of sugar prices, I find that the present level, in Delhi, is for example, Rs. 42.34 nP. per maund. In Jullundur, it is Rs. 42.00. In Kanpur—it is an all-India market —it is Rs. 41.25. You will have to realise that the ex-factory price that has been fixed for Uttar Pradesh during the period of control was Rs. 38.75. If you take into account all these burdens that have been mentioned and the additional cost of production because of the shorter season, we cannot say that the present level of prices is unreasonable and so high as to cause much anxiety.

Shri Kashi Ram Gupta: What about the retail prices?

Shri A. M. Thomas: In Delhi, the retail price is Re. 1.10.

Shri Kashi Ram Gupta: No. It is Re. 1.40 or Rs. 1.50.

Shri A. M. Thomas: My hon. friend himself is not sure whether it is the one or the other. But I say from the reports that I have received that per seer the cost would be Rs. 1.10, and in some other markets, for example, in Kanpur, it would be less.

I shall take two or three minutes more, because it should not be said that I did not refer to some other

[Shri A. M. Thomas]

important points. We realise this, and the Agriculture Ministry is quite conscious of the fact that our efforts should be in the direction of additional agricultural production. With that end in view, as far as several schemes are concerned, we have revised our targets and fixed additional targets for each item. Shri Yashpal Singh who initiated the discussion referred to the question of providing irrigation facilities. I do not think there is any other subject, as far as agricultural production is concerned, which has been given so much importance as the scheme of minor irrigation. That has caught the imagination of the peasants also and there is a great deal of demand from all parts of the country for increased minor irrigation facilities, because they yield quick results. There is no question of time-lag as far as the utilisation of the water potential that has been created is concerned and there are various advantages like smaller outlay. So, considerable importance has been given by the Agriculture Ministry to minor irrigation and the target has been increased by 50 per cent.

With regard to the implementation also, in some States the implementation is not very satisfactory, but by and large the implementation has been satisfactory as would be seen from these facts. As far as the first two Plans are concerned, the programme of minor irrgation has resulted in bringing benefits by way of irrigation, drainage, embankment, etc. to about 18.5 million acres at a cost of Rs. 210 crores. The target for the third Plan is, 12.8 million acres to be brought under irrigation, 9.5 million acres under the schemes drawn by the Agriculture Ministry and 3.3 million acres under the Community Development Ministry. The total outlay utilised by minor irrigation works during the second Plan was about Rs. 140 crores and the amount provided in the third Plan before the target was increased by 50 per cent was Rs. 174.46 crores.

The tempo of minor irrigation has been steadily built up over the years in the second Plan and in the beginning of the third Plan, with the result that there are adequate number of schemes. In 1956-57 we spent on minor irrigation about Rs. 14.6 crores, but in 1962-63 we will be spending about Rs. 40 crores. So, the tempo that has been achieved is something remarkable about which I think the Ministry can take legitimate pride. After the revision of the target, we have been able to sanction in addition about Rs. 10 crores to the various States for works connected with minor irrigation in the current year.

Shri Kashi Ram Gupta: In page 18 of the report, it is said that 6600 tons of damaged foodstuffs and 12300 tons of substandard foodstuffs have been sold. What do you mean by damaged and sub-standard foodstuffs?

Shri A. M. Thomas: With regard to damaged foodstuff, which is not fit for human consumption, but which is fit for cattle and poultry food only, we give it to those persons on whom we can rely and there is supervision also. But there may be grain which may be still fit for human consumption, but which has deteriorated, which we auction.

Shri Kashi Ram Gupta: What about the loss?

Shri A. M. Thomas: The loss is negligible.

Many hon. Members have referred to the Delhi Milk Scheme and I would say a few words about it, although I do not have time to refer to some other matters like animal husbandry, and fisheries. With regard to the Delhi Milk Scheme, we are now handling about 4600 maunds of milk. It is true that a loss of about Rs.4 lakhs was incurred. Even though the scheme originally envisaged was to run it on a no-profit-no-loss basis, we feel that we would be running the

scheme even on a small profit. Compared with the losses that have been incurred by other big dairies in Bombay, a loss of Rs. 4 lakhs is not much.

Shri Kashi Ram Gupta: With an investment of Rs. 208 lakhs!

Shri A. M. Thomas: Towards the end of the third Plan, i.e. in 1965, our idea is to handle about 7000 maunds per day. When we are in a position to reach that full capacity, we will certainly run it on a no-profit-no loss basis. The hon. Member does not realise that the milk is sold by us at 62 nP. which is perhaps the lowest price levied by any dairy anywhere in the country. We sell at that rate because it is an urban population we cater. We have to maintain the price level, we have to cater to Government servants drawing low salaries and low income groups. The requirements of persons in this income-group have to be met. So, we have thought that it should be a reasonable price and we have fixed 62 nP. If it is found necessary, of course we can revise the consumer's price and I think I will have the support of the hon. Member and others when the day comes when I may have to raise the price.

The hon. Member referred to the question of getting milk from Bikaner. It is as a result of the delibrate policy that has been adopted by the Agriculture Ministry in the matter of dairy development that these dairies should be utilised as a basis for intensive cattle development schemes. in what are called milk shed areas. As far as the supply of cow's milk is concerned, the Bikaner area is a very good pocket. Before we entered there, almost the entire milk was used for the manufacture of ghee. Now they are getting a better price. Their production is inceasing and their economic condition is also improving. I do not know why my hon. friend grudges it when it is found that area is developing because of the efforts of the Delhi Milk Scheme.

As I have said, it is the policy of this department in other dairy shed areas also to resort to intensive cattle development schemes and adopt dairy expression schemes, by giving loans for the purchase of cattle, by taking steps in the matter of availability of feed and fodder and in other ways,. In pursuance of that scheme, in a concern that is run by the Central Government, we thought it is only fit and proper that we show to the rest of the country how cattle development schemes can be carried out. So, my hon. friend should welcome it, rather than grudge it.

I have taken more time than I intended to take. With these world, I commend the various demands to the acceptance of the House.

Shri K. N. Pande (Hata): Mr. Chairman, the Food and Agriculture Ministry has got so many subjects under it, but I would only refer to the subject of sugar industry and cane. First of all, before proceeding any further, I want to say one thing about the speach made by Mr. More.

Although I have got great respect for him, I must say that one unfortunate part of his speech can create a feeling of difference between the regions. He said that Maharashtra is carrying the burden of Uttar Pradesh and Bihar.

An Hon. Member: Quite true.

Shri K. N. Pandey: It may be true. But, anyway, let me say something, and let the hon. Member have the courage to hear me also. I want to ask, in what respect the burden is being borne by Maharashtra. I can understand that there is a greater yield per acre of land of cane. But in what respect, may I ask, the consumers of that very State are getting any relief because of this higher yield? Is the sugar selling at a cheaper rate in Maharashtra? What is happening? Up to this time Maharashtra was not self-sufficient so far as production of sugar is concerned. Sugar used to come into Maharashtra and elsewhere

[Shri K. N. Pande]

from Northern India. Although, their cost of production was very low but because sugar was coming from the North Sugar Mills, there had been given freight advantage. Therefore, sugar which was selling at Rs. 105 per bag in the north was selling at Rs. 112 and sometimes still higher in the south and elewehere.

I want to ask whether you do justice to the consumers of your Pradesh. Why do you say there is a great duty of carrying the burden of so many people. So far as the price policy of the Food Ministry is concerned, what effect has it created in the country? In 1956, when the implementation of plan was in operation, there was an idea before the Planning Commission that *per capita* national income will become double at the end of third plan. I think while fixing that target the Planning Commission must have in mind the production of sugar and the earning of the workers employed in the sugar industry. But what is the position? I can just give you one example. Is this the way to see that the *per capita* income is going to be increased? Take, for example, Uttar Pradesh. In 1959-60 the cane crushed by factories was 126 lakh tons. In 1960-61 it was 149 lakh tons. In 1961-62 it was 129 lakh tons. In the last season it was 90.74 lakh tons. Thereby, we can expect how the *per capita* income in the country also will increase.

What happened? In the beginning, when the new policy of fixing cane price was announced, I expressed my views before the Food Minister pointing, out as to what damage it would cause.

15·23 hrs.

[MR. SPEAKER *in the Chair*]

You will see, Sir, how justified we are in placing our arguments in this connection, that the formula of linking the cane price with the recovery of sugar cannot function well. For example, there is the Shamli Sugar Factory. That factory is stil running because it increased the price by four annas per maund. Most of the factories have been closed. Factories which used to run for six months have stopped working in three months. What is its effect on the employment position? People who used to be employed in sugar factories and got their salaries for six months have been deprived of their full earning. This is the way the *per capita* income is sought to be increased. Either there is something wrong with the planning or with the implementation of the Plan. I can only say that this is not the way. The figures given by Shri Bibhuti Mishra were challenged to some extent by our Deputy Minister. He prophesied as if we were going to have a higher production of sugar in the country this year. I can tell him that time will show the fact. Time will let you know that we are going to have production of 21 lakh tons to 22 lakh tons of sugar only.

Shri S. K. Patil: He was making. prophesies for the next year; that is, a year after.

Shri K. N. Pande: The production of this year will go up to the next year.

Shri S. K. Patil: The "Satya Narayana" was for the other thing, not for this.

Shri K. N. Pande: I am not concerned with the "Satya Narayana". This is the figure of production that you have given.

Shri Sonavane: He is performing another "Satya Narayana".

Shri K. N. Pande: It is said here that as the sugarcane crop has turned out to be poor and production of sugar in 1961-62 came to only 27·24 lakh tons as against 30·29 lakh tons in 1960-61—that is, a fall of 3·15 lakh tons. It is also said that with the carry over of 12·02 lakh tons the total availability of sugar during 1961-62 was of the order of 39·1 lakh tons. Now we are going to have only

22 lakh tons this year. Therefore, see what is going to be carried over to next year. We are going to export about 4·3 lakh tons of sugar outside. Our need is increasing. Our own consumption in the country is increasing and it may come up to 26 lakh tons. If these 30 lakh tons are thus consumed, there is no carry over for the next year and we have to depend on the production of the next season which is going to be had in the next year. How can you get extra sugar in order to fulfil your commitments to other countries and also to meet the requirements of your own country?

So far what has happened? Sir, I was a member of the Sugar Control Board which used to regulate the sugar price and cane price from 1947 onwards in U.P. and Bihar. So far, until recently the matter was taken up by the Central Government, the price was determined at the Sugar Control Board level. They fixed the target of sugar production and also the sugar prices. Now this matter has been taken up by the Central Government. The State Governments are saying that unless we increase the price of cane they will not be able to increase the production of cane, whereas the Central Government is adamant that its policy will remain. I was very eager to know what reasoning was there behind it, what reasoning was there for introducing this formula of linking of the price of cane with the recovery of sugar. By this way you thought the individual cultivators would be induced to produce a better type of cane. But how is it being worked. It is being worked on the collective result of the factories of the last season. The cultivators are being paid on the basis of the recovery that the factories had in the last season. That recovery figure is arrived at as a result of the cane crushed and supplied by bad and good cultivator. Therefore, there is no inducement to individual cultivator. My suggestion is, instead of being firm on this policy you may kindly consider the question of revising it, because it is not going to work and it will cause a great damage and give a severe hit to the cultivators as well as to the workers in Uttar Pradesh and Bihar and Punjab.

You can say that they should have more yield of cane. That is good. If they can have more yield of cane per acre they are going to get more prices. But the point is, whether they should be given proper prices for what they have at the moment. Even if you are going to develop cane, as announced by you just now, in Uttar Pradesh and elsewhere, what is going to happen. 5000 acres are going to be developed in the area of each sugar factory, but there will be no strict watch over supply. What happened this year. Because in one factory the rate of cane was Rs. 1·75 and in another factory by its side it was Rs. 1·50, all the cane went to the second factory and thereby the first factory was forced to close down. How are you going to regulate to see that the cane so developed is going to be supplied to that very factory? You have no machinery at all. Therefore, kindly find out a solution. The solution is to fix botter and an *ad hoc* price till the cane is fully developed. Because, unless you have a better type of cane, you cannot have that result. Let the cane be developed first. Uttar Pradesh is going to extend the programme of its development within two or three years in the total area. Then you can have that type of cane which is required by the factory, giving more sugar and also better price to the kisans.

Now let us see what is going to happen. I very much apprehend that this year the sowing has not been satisfactory because the kisans feel that they are not going to get a better price for their cane which they produce with hard labour. Therefore, they have been discouraged. You say that the cane has been converted into *gur* and *khandsari*. They are always there but why the price of sugar is increasing. There is a crisis for crystal white sugar. We should understand it. If the cane has been converted into *gur* and *khandsari*, why should there be a shortage of sugar and why is the price of sugar increasing? You have

[Shri K. N. Pande]

deprived the kisan of two annas. Had they been given two annas more as befire, sugar would have been available at Rs. 37:85 per maund—the rate prevalent before the control. But after introducing the cane price the price of sugar has gone up to Rs. 42 per maund. What is the gain? How are the consumers going to be benefited by your scheme?

My suggestion is that you should kindly fix one price till the cane is developed, so that the kisans are assured that they are going to get a better price, a better return for their hard labour.

I apprehend that the season next year is going to be shorter than this year. That will mean another crisis of white sugar and shortening the period of employment of the workers. You have to keep this fact in mind. For example, when there was a crisis in the supply of sugarcane to the factories, the Secretary of the Food and Agriculture Ministry went to the western districts and went round the factories. The factory owners came before him and requested that they may kindly be permitted to increase the cane price. He said that he cannot take that risk, because if he agreed to the factories increasing the cane price, then he had to allow to increase the sugar price also. So, he left this matter undecided. This is what is happening. If the owners have given more price for the cane, naturally, they will charge a higher price. Can you stop it? You cannot stop it. The natural force is so strong that we have no machinery to control it. So, they are also justifying higher charge. The price of sugar is going higher.

After all, the sugar factories cannot afford to close down the factories. The workers cannot allow them to be closed, because they have also to exist. They will press that the factory should be run. Therefore, in order to maintain the employment level and also to save themselves from loss, the factories have to run. So, they are bound to increase the cane price. Present condition has not resulted into shortening the period of employment of workers but it has caused a great loss to the factories. It is such a condition which requires your serious consideration. This is not an easy matter. A time may come after four or five months when you will be forced by nature to consider this matter very seriously.

श्री ह० च० सौय : अध्यक्ष महोदय, कृषि के सम्बन्ध में मैं एक खास पहलू की ओर सरकार का ध्यान दिलाना चाहता हूं और वह यह है कि हमारे देश के उस इलाके में जहां बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश और बंगाल का हिस्सा पड़ता है उसमें हमारे नये उद्योगों और नई खदानों के बढ़ जाने की वजह से जो कि पिछली दो पंच वर्षीय योजनाओं में बहुत बड़े पैमाने पर स्थापित हुए हैं और आगे भी होने वाले हैं, उस से कृषि योग्य जो जमीन है उस पर एक गहरा असर पड़ा है । हमारे कृषि मंत्री डा० राम सुभग सिंह जानते हैं कि उस इलाके में एक ओर तो अपनी योजना से मुताबिक जंगल के लिए अधिक से अधिक जमीन हम चाहते हैं जब कि वैसे ही अपनी प्राकृतिक अवस्था में जमीन खेती के लायक जो है वह एक चौथाई से भी कम है । फिर जैसा मैंने कहा नये उद्योगों के कारण, डी० वी० सी० दुर्गापुर, राउरकेला, और भिलाई और हटिया के लिये काफ़ी बड़े पैमाने पर जमीन का अधिग्रहण हो रहा है और इन नये उद्योगों और खदानों की वजह से परिणाम यह हो रहा है कि खेती लायक जमीन कम होती जा रही है । वैसे खेती लायक जमीन पहले से भी कम है लेकिन इस वजह से वह और भी कम होती जा रही है ।

नये खदानों और कारखानों के कारण वहां जनसंख्या बढ़ती जा रही है और उसक

नतीजा यह हो रहा है कि उस इलाके में जहां खाद्य उत्पादन पहले से ही कम है, खाद्य स्थिति बहुत संगीन होती जा रही है। मेरा अपना ख़याल ऐसा है कि कृषि विभाग को इस सम्बन्ध में प्लानिंग कमिशन से बातचीत करनी चाहिये और इस बारे में दुबारा विचार किया जाय ताकि यह जो एक इनबैलेंस तैयार हो गया है, कृषि योग्य ज़मीन जो कम होती जा रही है उसको कैसे पूरा किया जाय, उस पर कितनी दूर हम बढ़े, इन सब बातों पर कृषि मंत्रालय और प्लानिंग कमिशन द्वारा दुबारा सोच विचार किया जाना चाहिये।

मेरा अपना ख़याल है और जैसा कि बिहार जैसी जगह पर हम लोगों ने हिसाब लगा कर देखा कि यह छोटे नागपुर के इलाके में पंचवर्षीय योजना के मुताबिक सारे राज्य में बल्कि हमारे सारे देश में ३५ प्रतिशत ज़मीन पर हम जंगल लगाना चाहते हैं, मगर हम लोगों ने देखा कि उस इलाके में पहले से ही ५८ प्रतिशत से ले कर ६० प्रतिशत तक जंगल लगा हुआ है। लेकिन इसके विपरीत राज्य के दूसरे इलाके में जैसे कि नार्थ बिहार में जहां कि जलाने के लिये लकड़ी की ज़रूरत है और सारी चीज़ों की ज़रूरत है वहां एक प्रतिशत से भी कम जंगल है। इसलिये मेरा निवेदन है कि क्यों न सरकार इस चीज़ पर विचार करे कि जहां योजना के मुताबिक़ ३५ प्रतिशत से काफ़ी ज्यादा इलाके में जंगल है, उस प्रतिशत को ठीक करने के लिये राज्य के दूसरे इलाक़े में जहां लकड़ी की बहुत ज़रूरत है वहां क्यों न उस प्रतिशत को पूरा किया जाय। मैं सरकार से विनय करूंगा कि वे इस पर विचार करें।

दूसरी चीज़ जैसे कि मैंने अभी कहा कि यह अधिकाधिक जंगल लगाने की योजना के कारण और नये उद्योगों और कारखानों के कारण खेती लायक ज़मीन जो कम होती जा रही है और जिसका कि असर वहां के कृषि उत्पादन पर पड़ता है, उस पर भी हमें सोचना चाहिये कि कितनी कितनी दूर हम जंगल और कृषि के सबन्ध में ज़मीन को लगायेंगे।

मैं एक ही चीज़ और कह कर अपना भाषण समाप्त करूंगा। पिछले साल माननीय मंत्री डा० राम सुभग सिंह हमारे इलाके में गये थे। अभी मैंने कृषि तथा खाद्य मंत्रालय की इस साल की रिपोर्ट में भी देखा कि इस चीज़ पर संतोष प्रकट किया गया है कि खाद्य उत्पादन संतोषप्रद है। हम लोग डा० राम सुभग सिंह से भी मिले थे। मुझे अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि हमारे दो, तीन ज़िलों में मलसन् सिंहभूम और रांची आदि में इस साल अनाज की फसल काफ़ी मारी गई है। उनके आश्वासन के बावजूद अन्न का माकूल इंतजाम वहां के लोगों के लिये नहीं हो पाया है। इस सम्बन्ध में हम लोग जिले के अधिकारियों से मिले और अन्य सभी सम्बन्धित लोगों से भी मिले थे। लेकिन अभी भी वहां चावल, जो कि वहां के लोगों का मुख्य खाद्य है, अभी भी वहां पर २७–२८ रुपये मन बिक रहा है। हम ने मिनिस्टर साहब से दरख्वास्त की थी कि वहां रिलीफ का काम किया जाय लेकिन इस तरह का रिलीफ़ का काम होने के बाजय सरकार इस एमरजेंसी के नाम पर उलटे जो लगान और कर्जे आदि की वसूली है उसको वसूल करने में लगी हुई है। वे बेचारे जिनकी कि सारी फसल मारी गई हो वे यह कर्जे कहां से दगे ? जब हम इसके लिये उन से मिलते हैं तो सरकारी अफ़सरान कहते हैं कि हम लोग तो यूं ही फारमली मांगने जाते हैं और जो उसको देना चाहते हैं वे देंगे। लेकिन मेरा निवेदन है कि जब सरकारी अफ़सर लगान कर्जे और आदि की वसूली के लिये रैय्यतों के पास जाते हैं तो वह बड़े अफ़सरान की हैसियत और उन बेचारे काश्तकारों की मजबूरी हालत

[श्री ह० च० सौय]

अपने अपने खेतों मवेशियों और अन्य चीजों को बेच कर वह कर्जा चुकाना पड़ता है । आज हालत यह बन रही है कि बजाय उन मुसीबतज़दा लोगों की सरकार की ओर से रिलीफ दी जाती, इमरजैंसी के नाम पर उलटे उनसे लगान और कर्ज की वसूली हो रही है । अध्यक्ष महोदय, मैं आप के जरिये माननीय मंत्री से दरख्वास्त करूंगा कि हमारे सिंहभूम और रांची आदि इलाकों में जहां कि काफ़ी फसल मारी गई है, उनको रिलीफ देने का इंतजाम करें । इसके लिये हमने बिहार सरकार से भी दरख्वास्त की है कि यह इंतजाम नहीं हो रहा है । मैं चाहूंगा कि उनसे अपना हिसाब किताब करें और रिलीफ का इंतजाम करें ताकि वहां लोगों को अन्न मिले ।

Shri Muthu Gounder (Tiruppattur): Mr. Speaker, Sir, the hon. Deputy Minister of Agriculture has tried his best to give us a bright picture of the future, specially about foodgrains but I find by studying the report given by the Department that the future, as far as paddy is concerned, is gloomy. We were trying for the past ten years and more to grow more food. No doubt, with the hard work of farmers and with the encouragement given by the Government then and there, we were able to succeed to some extent. But till 1961 the production of foodgrains, specially of paddy about which I want to say something, was on the ascendancy. After 1961 and in 1962 the production of paddy has come down. In 1960 it was 34.2 million tons; in 1962 it was 34.1 million tons, that is, the production has come down from 34·2 million tons in 1960 to 34·1 million tons in 1962. So, we are now coming down as far as rice or paddy production is concerned.

Last year we, in Tamilnad and Andhra, had a bumper crop. No doubt, in other places like Bihar, Assam or Uttar Pradesh, there might be calamities, but in spite of a bumper crop in Madras and Andhra we see that production is going down. Why? We have to study this. We have to analyse it. We see in the report that about eight lakh acres in West Bengal and Bihar have been diverted to jute crop cultivation. Why should they go to jute crop instead of paddy crop? It is because by raising a paddy crop a farmer is incurring a loss. That is why he has gone to the commercial crops. That tendency has now come to the ryots of Tamilnad and Andhra also, in fact everywhere. By producing paddy a farmer is incurring loss and he cannot continue bearing this loss for ever.

The very low price that was offered to Madras ryots specially those who were doing farming in the Tanjore Delta area, has discouraged them to a very large extent. I have, for instance, seen some accounts kept by paddy growers who also happen to be hon. Members of Parliament and I was astonished to see that they have incurred a loss. As far as the farms in our area are concerned, we are not incurring losses. But in the Delta areas, in the Tanjore and Trichinopoly areas, the paddy growers are making a loss. Those farmers who are growing cotton and sugarcane are getting some remuneration.

Now, the wages of agricultural labourers have gone high. They are going higher and higher every day. We have to give it. The labourers now go to the mills or to railway contracts. They want to go and work on some departmental works, for instance, PWD and other contract works, because ther are getting higher wages there. A ryot who is producing only paddy cannot afford to pay so much wages. Therefore, he has got no other alternative but to shift from paddy crop to any other commercial crop. We are coming to it. If the Government does not interfere and give a reasonable rate and reasonable price struc-

ture, the paddy cultivation will come down and it will affect the entire community.

No doubt, even now, even at the present market rate, some low-income group people and low-paid Government servants are not able to purchase rice at market rates. We have to find some solution. There is no other alternative but to supply them rice at a subsidised rate. The Government is already incurring expenses, under subsidy, of nearly about more than Rs. 40 crores. Therefore, there is no harm in providing a subsidy of some more crores of rupees at least to give foodgrains, especially rice, at a reasonable rate to the poor consumers. That also we have to take into account.

Hereafter, unless we increase the yield per acre, there is no way of improving or increasing the production of foodgrains, especially increase in paddy production. In the past, for ten years, we were having virgin lands to bring under plough. Also, we are having many irrigation schemes. They have almost exhausted all those sources. We cannot bring lands more and more under plough because we have to keep in reserve at least a portion of lands without cultivation or, otherwise, the entire soil conservation scheme will go futile. So, there is no scope. We have to see that we get more yield per acre. It is not an impossibility. The all-India average, as far as paddy yield is concerned, is less than a thousand pounds per acre, whereas in Madras and also in Andhra Pradesh we are able to get more than 1400 pounds of paddy per acre. Especially in our farms--I do not think it is out of place to mention it here—we are getting more than 4000 pounds of paddy per acre, not for the last one or two years but consecutively for the last ten years. We are not adopting any new techniques. We are not importing any new techniques from Japan or America or Burma. We are only adopting the techniques which were adopted by our fathers and fore-fathers. That is all. Nowa-days, it has become more the fashion to call anything the Japanese method or Chinese method or some other method than to introduce our own method. That has become a fashion these days. However, we were successful in producing more from our fields by using our own methods. By using our methods, I hope, India will get as much rice as it is needed. Take, for instance, these figures. We have produced 341 lakh tons of rice this year. We have imported only 3·9 lakh tons from Burma and USA. It is just above one per cent or, more or less, one per cent of the total production of rice which we are producing in our own country. Can we not achieve this one per cent? I think, in 1959, we were producing only 31 million tons. But in 1961, we were able to get a production of 34 million tons, that is, ten per cent increase. When you were able to get an increased production of ten per cent in one year, would it not be possible for us to get an increase of two or three per cent year by year? We can. Why are we not getting it? The agriculturist is not given the incentive. I produced 500 bags of paddy this main season. I sold it two months back. I have not started incurring a loss. But, I got a very meagre profit. This season, I used to get a yield of 200 bags or 300 bags of kar paddy as we call it. You may call it short term crop or rabi, I do not know. I have completely stopped paddy cultivation, because I cannot be incurring a loss continuously or recurringly. If at all we succeeded in having more production in rice, that was not due to any preaching or any other propaganda or any other thing that was given to the ryots, but because of price attraction. Only the price was the incentive for him. If you cut it there, paddy cultivation will go once for all down. We have already begun to feel it. In West Bengal, they have switched on to jute crop in about 8 lakh acres. This year, in my opinion, more lakhs would have gone to jute crop. In my area,

[Shri Muthu Gounder]

we have once for all decided to go to cotton crop. In other areas, I see intelligent farmers have gone to sugarcane cultivation and other commercial crops, groundnut, this and that. Can we see a bright future or a bright picture as far as rice is concerned?

Also, unless we give a remunerative price to the farmers, how can we give more wages to labour. Instead of giving crores of rupees to foreign countries, instead of getting foodgrains from them, let us spend that money as subsidy or to keep the price structure at a level. Then, we will be having our money in the hands of the farmers and they will give to labourers and their income will go up. We always say that our *per capita* income is very low. How to increase the *per capita* income? By starting a few industries here and there, we will be raising the income of a few industrialists, some hundreds or thousands and also we will be raising the income of 5 lakhs or 10 lakhs of labourers. But, still we should remember that the huge bulk of our population is in the villages, and that too, in the form of landless labourers and small land owners. I am not arguing for big landlords. I am saying for land owners of my type, who are owning 20 to 30 acres. There are hundreds and thousands of farmers of our type. By our hard work, we were earning a good amount so far. Also, we are thankful to the Government. The Government were giving us attractive prices for our things. Now, they have stopped. I cannot say anything; we have to pity. That is all. We have gone in for other crops. One day or the other, next year or the coming year, we will feel the stringency, a very gloomy position as far as rice is concerned.

Mr. Speaker: In conclusion,....

Shri Muthu Gounder: Two minutes, Sir. As far as manure is concerned, I would say, we are applying oil cake manure. Always the green manure and compost, we cannot prepare to a large extent. Oil cake is an easy manure which can be applied to a field the first day and we can transplant our paddy the next day. So, it is easy, and also it is an organic manure: not chemical manure. We are exporting, I think, 6.8 lakh tons of oil cakes this year. By using these 6.8 lakh tons of oil cakes, we can very well manure 16 lakh acres of paddy lands. We are exporting oil cakes and in its place, we are getting chmical manure. By applying chemical manures in the same field consecutively for 2 or 3 years, the field will become quite useless for any cultivation. I think that this is the impression which has been formed in the minds of the farmers today. We have to use organic manure. Using chemical manures is advisable only along with organic manure, or chemical manures should be used with compost and other things. But the exporting of oil-cake on such a large scale has created a situation whereby we are unable to get oil-cake at reasonable rates. That is why we are finding cultivation more costly, because oil-cake forms a major portion of our expenses, as far as our cultivation is concerned. A farmer who has to pay a high price for all commodities which he has to purchase cannot afford to get a low price for his paddy, and he cannot pull on with the cultivation of paddy unless he gets a fair price for his paddy.

As regards the district Agricultural Commissioners, we find that they are only in the fourth or the fifth rank. Their status should be enhanced. Among the district officers, his rank is very low. Besides, in the block development offices the extension officers of agriculture have to work under a commissioner who does not know anything about agriculture. We should make it a principle that only a man who has got some experience and who is an expert in agriculture should be made a district commissioner or a commissioner attached to the panchayat

union. Then only he can give some idea to the people in regard to agriculture.

Further, I would suggest that in every State, the agriculture portfolio should be handled by the Chief Minister himself. Then, only agriculture will have some importance, and the officers will have some merit and they will promote agricultural development properly.

Shrimati Yashoda Reddy (Kurnool): I would like first of all to touch on one of the major things, which is agitating the minds of so many people, namely the question of prices. The current concern of Government on the issue of price inflation followed by the public disquiet is a welcome thing, but I feel that it will be welcomed only if it produces an effective and realistic policy. It is gratifying to note that the Planning Commission has given a thought to this subject where there had been a sort of unjustified complacency for some time.

But there is one thing that I would like to say in this connection, and that is that it has become an integral part of our thinking that prices mean immediately foodgrains prices, and if there is a rise in the cost of living we immediately think of controlling only the foodgrain prices. Though to a large extent it holds good and it does result in the controlling of the price index, I should say that it is high time that Government realise that the consumption pattern of people, because of the extra monthly income has also changed. Today, even among the lowest income group, their demands are not only for some rice and paddy but they are for other articles like milk, soap, oil etc. It is these consumer articles which make the price index go up. So, what I would like to say is that these things have also to be taken into account, and we should not merely think as we have done so far of trying to control the prices of foodgrains and thereby hitting the agriculturist and the farmer.

This assumption that the price index depends mainly on the foodgrains prices has been belied due to two reasons. Firstly, though we have wheat and other foodgrains, still we have found that the price index or the cost of living has been rising. Secondly,—and this is the most important thing—as I have said, the consumption pattern has also changed. Unless the Planning Commission and the Ministry of Food and Agriculture take proper notice of these things, it is not possible for them to do proper justice.

It is argued that regulatory measures could not and need not cover the consumer goods. I would submit that this view betrays a lop-sided perspective and a lamentably inadequate appreciation of the situation. The Planning Commission has to change its thinking and so also the Ministry of Food and Agriculture of the Government of India.

Whenever we want to tax, we tax the agriculturists, because the agriculturists constitute nearly 80 per cent of population, and very rightly so; I am not criticising it; Shri Morarji Desai is here, and I may tell him that I am not criticising it. But I would submit that we should see to it that the agriculturists should not be the only pivot or target for all our policies.

In this connection, I would like to congratulate Shri S. K. Patil on what he has stated recently. On the 26th February, while speaking before the FAO Technical Committee meeting, he has stated that hereafter the price policy would become producer-oriented and not so much consumer-oriented. I hope hereafter he will keep up to it.

17 hrs.

Shri Ranga: What can he do? Poor man.

Shrimati Yashoda Reddy: I hope he meant it. I want him to follow it up.

Shri Ranga (Chittoor): He means it. But it is the Government which has to do it.

Shrimati Yashoda Reddy: I would like a clarification on that. In this country we are having a socialist pattern. The small farmer, for whom there is often no alternative to distress selling, should be the principal beneficiary of any of the policies we follow. Farmers are unable to hold back the produce till profitable prices are given to them. The Government does not always allow them to get the benefit of the law of supply and demand. This attitude constitutes the root cause of their poverty and fall in production also. In the Indian Union, on the whole, factory wages are three times the wages that agricultural labourers get.

An Hon. Member: More than that.

Shrimati Yashoda Reddy: Agriculture has often been last in the list of government priorities. The farmers' services should be appreciated as much as those of the other brothers in other fields. The benefits of loans, grants, irrigation facilities, fertiliser facilities and so on should be well distributed. Sufficient flow of capital should be ensured and profits should be strongly encouraged. I say so because this is the chief measure by which resources can be put back at the disposal of the farmers. Unless there is a little bit of profit, there will certainly not be an incentive for them to produce more. That is why our production is going down.

The hon. Member who preceded me said that people are turning from food crops to cash crops. We want to fill up the gap in foodgrain requirements by importing foodgrains. The more you import foodgrains, the less incentive there will be for production here. So why not give them more incentives? Of course, I do appreciate our Minister's policy to keep a buffer stock to rush it to areas where it is necessary in an emergency. But certainly we have got to think about the question of giving more incentives to the farmers.

One of the Members said, very correctly, that there is no co-ordination between the Ministries of Community Development, Planning and Agriculture. That is so not only down below but at the top level. We have an integrated body called the Planning Commission which seems to have an overall status, a sort of super Cabinet, which can only come in the way of things being done. Whatever the Minister says, the Planning Commission comes in the way. As far as agriculture is concerned, at least in the case of my State I know of instances where we have asked the Ministry to do certain things. But what happens? The Planning Commission comes and says 'no'. I do not, for one moment, question the capacity or honesty of these people in the Planning Commission. But they are not experts on every subject. I should say they know nothing of many things. I am not criticising them. It is impossible for any group of people to know everything. The only silver lining in the Planning Commission is the Prime Minister. We have to go to him for getting things done. But he cannot always deal with these matters. He is so committed to the policy of 'non-alignment' and non-intervention that he does not want to interfere with matters at the State level.

We have a great genius in India. For every trouble, a commission or committee is appointed. This commission or committee has got the genius of prolonging a problem, delaying matters and not coming to any conclusions and confusing things. Even this morning the hon. Speaker was saying that hurdles should not be there. We find more hurdles and bottlenecks.

Take, for instance, the irrigation problem. We asked the Planning

Commission through the Ministry for minor irrigation works. But the Planning Commission cuts it.

Shri A. M. Thomas: There is no cut.

Shrimati Yashoda Reddy: I am told this is with regard to minor irrigation works in Rayalaseema. I know of major irrigation projects sanctioned by the Planning Commission. The Planning Commission says: 'You are an agricultural State. You are already forward in agriculture. Why do you want more water?'. Does it mean that an agricultural State should not be developed? When we ask for industries, we are told that we are an agricultural State, why do we want industries. What is this policy of the Planning Commission? It says it operates on national policies and asks us not to be parochial. If you want to be national, help the State which is supplying food for the whole nation. Nagarjunasagar has been given to us as a national project, for producing food for the nation. We did not want it for the benefit of Andhra Pradesh. Out of the State's development expenditure we have to do it. When we ask for more money, we are called parochial.

The Minister of Finance (Shri Morarji Desai): After getting it, you do not want it.

Shrimati Yashoda Reddy: We are thankful to you, but I am pointing out that the Centre is not giving us much aid at all. You look at a problem as national if it suits your convenience, otherwise not. Sometimes the philosophy, personal whim and prejudices of those in the Planning Commission come in the way.

The Ministry is rightly giving thought to popularisation of subsidiary foods and the promotion of applied nutrition. I am glad it has been transferred from the Ministry of Agriculture to Food, not that there is much difference, I have the same regard for both the hon. Ministers.

Shri A. M. Thomas: It is not transferred.

Shrimati Yashoda Reddy: I read in the Report that the Ministry of Food has taken it over from 8th March.

Shri S. K. Patil: That is fisheries.

Shrimati Yashoda Reddy: Thank you for the correction.

After all, when there is deficit in foodgrains, certainly subsidiary foods should be encouraged, especially from the nutritive point of view. The Government of India has taken great interest in fishing. In exploratory and experimental fishing they are going ahead at Bombay, Cochin, Tuticorin and Vizag. Here, I have to make a request which is absolutely regional, namely about setting up a Fishing Corporation at Vizag.

The marine and inland fisheries potential of Andhra Pradesh has been very poorly developed. There is a 600 mile long coast line, and the State is called a land of rivers. There is a large abundance of quality fish both for export and internal consumption, but the fishermen being very poor with inadequate facilities, we are not able to do much.

Vizag should be considered because of its peculiar specialities. Already, a portion of its harbour is being developed as a fisheries harbour. A jetty has been already constructed for berthing vessels. The State Fisheries Department has already constructed a 20-ton ice plant as also a deep-freezing plant with a capacity of 50 tons of ice and 350 tons of cold storage. There is a workshop at the Hindustan shipyard and also at the naval shipyard. There are many foreign firms setting up fishing companies in Vizag. I therefore request the hon. Minister to give very serious thought to it. I hope he will look into the question of establishing the Fishing Corporation at Vizag.

[Shrimati Yashoda Reddy]

The other day the hon. Minister, in answer to a question, assured me that there will not be much difficulty about the setting up of an agricultural university in the South, but my information is that the Planning Commission, as usual, is coming in between. I hope the Ministry will be strong enough to override the hurdles and grant us the university.

Mr. Speaker: I have the experience that calling a lady to speak on food raises controversies.

The Minister of State in the Ministry of Food and Agriculture (Dr. Ram Subhag Singh): I am very happy to watch the trend of this debate, and I am glad most of the hon. Members have expressed concern about agricultural production. They want that the production tempo should increase. I promise here that nothing in our power will be spared in seeing to it that agricultural production is kept to the mark. There is one thing to which I would like to draw their attention. My able colleague Shri Thomas has already pointed out some of the difficulties due to which production fell down last year. But this year there is likely to be an increase. It was not only in India that there was this fall in production; this trend was noticeable throughout the South-east Asian region and from the figures you will see that this has been the trend in some of the advanced countries of the world. For instance, the figures of grains production for the United State, Canada and Japan for 1950-51 are: 140.7 million tons, 23.5 million tons and 15.7 million tons respectively. The highest figure reached in 1958-59 in the USA, Japan and Canada was 182:6 million tons, 22·6 million tons and 18.8 million tons respectively. During the past three years there has been a fall in production in all these three countries. In America from 178.7 million tons in 1959-60 it went up to 191.8 million tons in 1960-61 but came down to 167·8 million tons in 1961-62. Similarly during the last two years it fell down from 25:8 million tons to 16 million tons in Canada and from 20 million tons to 19:6 million tons in Japan. Whatever little fail there was in production of paddy and maize, it was more than compensated by increase in our cash crop production. As hon. Members know our target for the Third Plan in regard to jute production was reached last year. Even this year there is no complaint about production, the complaint is about price. In that regard also, the Ministry of Food and Agriculture has seen that the farmers are provided all possible facilities. But if due to emergency and certain other reasons this succour could not reach them in time, the entire blame need not be put on this Ministry because we never felt that we should spare any efforts to see that the farmers are given all facilities. This has also been the case in regard to cotton.

The PSP Member was making certain complaints about the Minister of Food and Agriculture. I say without contradiction from any hon. Member of the PSP that the Minister of Food and Agriculture is more progressive than any PSP leader or Member. Had he not handled this Ministry of Food and Agriculture carefully, there would have been starvation in the constituency of the hon. Member who belongs to the PSP and he would have been busy there in his constituency.

17.19 hrs.

[MR. DEPUTY-SPEAKER *in the Chair*].

It is our cash crops which earn quite a substantial amount of foreign exchange earnings. The hon. Finance Minister is here and he can correct me if I am wrong. The export value of all these three commodities—jute, cotton and tobacco, and also sugar in respect of last year, and if we include tea also—would go to Rs. 360 crores, but if we exclude tea, it comes to about 238 crores. This is increasing each year and this is due to the labour that the farmers put in their fields.

Some hon. Members were saying that the per acre yield has gone down, but I do not think that they are correct, because, the per acre yield of paddy has increased from 1,253 lb. in 1958-59 to 1,364 lb. in 1960-61. The accurate figure for this year is not available at present; it will be available by June and I will give that figure at that time. The yield of wheat has also increased from 704 lb. to 756 lb. The production of sugarcane per acre has also gone up from 33,595 lb. to 39,654 lb. So also in the case of cotton; it has gone up from 93 lb. per acre to 112 lb. per acre. Of course I am not satisfied; I do feel that it should go up much higher, but still, it is not a figure of which we should feel sorry.

I am very happy that some hon. Members have mentioned about the prices. There has been a constant effort on the part of the Ministry of Food and Agriculture to see that a balance is struck between the consumers' price and the producers' price. It is in pursuance of that policy that the other day the Minister of Food and Agriculture announced that if the price of wheat goes down below Rs. 13 per maund anywhere, then the Government will enter the market. So is the case with jute and cotton. The moment we noticed a trend of decrease in cotton prices, despite the opposition of some sections, we did see that the producers got enough price, though that was none of the responsibility of this Ministry. The production figure might also have been calculated on the basis of certain other ingredients, such as irrigation, fertiliser, and so on and so forth. I am very happy that our esteemed Minister of Irrigation and Power is also here. One hon. Member remarked that there was unjustified complacency in the Ministry and that the Planning Commission should look into it. I have nothing to say about anybody. But during this emergency time, or even before that, there has not been any factor which we have taken from anywhere. Whatever was suggested was our original suggestion and that was accepted by everybody. This figure might have been calculated on the basis that the irrigation potential will be fully available, and efforts are being made by the Ministry of Irrigation and Power to see that more and more irrigation potential that has been created is utilised more and more, because, now, the utilisation is up to 71.1 per cent. But still an irrigation potential of about 4 million acres is unutilised. Similarly about other things. Shri Sinhasan Singh referred to the fertiliser pool. I admit that there was some profit from 1958 onwards. In 1961-62 it was to the tune of Rs. 9.47 crores. But now due to the measures that have been taken, the profit has gone down to Rs. 2.90 crores, because last year also, we reduced the price of fertilisers. This larger quantum of profit has been due to the fact that in foreign countries, the purchase price was less, whereas our production cost is what it is and so due to these two factors, there was some profit. But it has gone down considerably and we will see that with is properly modified in the interests of the farmers.

The House knows that according to the target laid down by the Plan and by the Government, we should have about 1 million tons of fertilisers in terms of nitrogen by 1965-66. But I am doubtful about this, because as I said yesterday in reply to a question, the entire indigenous capacity according to our present basis will be only 650,000 tons by 1965-66. So we will be short of the target by about 350,000 tons. So, these aspects about the fertilisers and irrigation should also be taken into consideration when the point regarding production is made out by hon. Members.

About agricultural implements, many hon. Members, particularly the hon. Member coming from Mahendragarh, said that there had been some difficulty. It was with a view to relieving some of the difficulties of the farmers that the excise duty that was supposed to be deposited by the farmer with the firm was wiped out.

[Dr. Ram Subhag Singh]

Of course, I have heard one or two complaints that even now some of the firms take that type of deposit, but on tractors up to 50 HP and less, nobody should make any excise deposit with any firm.

Shri Sinhasan Singh: Is it a fact that the excise duty levied on tractors is not paid by the growers?

Dr. Ram Subhag Singh: The exised duty was deposited by the growers and it was refunded to them when they produced a certificate. Now they will produce a certificate from their State Government or from the Director of Agriculture that they are going to use that tractor for agricultural purposes and then they would not be required to deposit anything.

Our programme is that we should make 9,000 more tractors available in 1963. According to the present plan, we will have 4,250 tractors produced in this country this year and the rest will have to be imported from USSR and some other countries. The main thing that I would like to emphasise and drive home to all the fabricators, factories and tractor concerns is that they should make available all spare parts which the farmers require and that there should be standard agricultural implements. Whoever may be the fabricators, they should fabricate the standard type of agricultural implements. For that purpose we have set up research, testing and training centres in 16 places. It is here at the IARI and in our intensive agricultural districts also. We are going to set up agricultural implements workshop in each district. Therefore, on this point there need not be much concern. Of course, due to non-availability of iron and steel due to the emergency, there might be some difficulty. But I would like hon. Members also to see that the steel quota that is allotted for agricultural purposes in their area is distributed among the agriculturists.

Many hon. Members pointed out about the credit made available to agriculturists. Of course, that is also not our direct responsibility. But I am happy that over Rs. 224 crores were advanced last year as short term loans on behalf of the co-operative societies. But there is one thing which I would like to emphasise—now that the hon. Minister for Finance is also present—and that is this. The Life Insurance Corporation is one of the biggest credit institutions in the country. I do not know whether it will be possible to advance some of its credits for agricultural purposes, because in my opinion it will do immense good to the cause of agriculture if we float more capital and go on increasing the investment capacity of the agriculturists every day.

About soil testing laboratories, Shri B. K. Das said that there are only 24 laboratories. We do want that we should establish more and more laboratories. We will do that and in each State there will be a laboratory covering all the districts where our intensive agricultural programme has been launched. He also made a reference about the agricultural college in West Bengal. I do admit that it is the State of West Bengal which is in a way very much lagging behind in agricultural education. In this constituency of Midnapur, perhaps, there was an agricultural college. But that has been taken over by the State Government. I would like that some of the hon. Members take a lead in this matter and induce the people there to set up a college or induce the State Government to do that. Whatever facilities can possibly be given from our side will surely be made available if the college comes up to the required standard.

Shrimati Yashoda Reddy also said about agricultural universities. I am very happy that three universities were established last year and more and more agricultural institutions are coming up. Shri Yashpal Singh said that the sons of farmers should be there. It is our earnest desire that the destiny of agriculture should be

controlled by the sons of ordinary farmers. It shall be also our effort to see that the education in our agricultural universities and colleges is made as cheap as possible so that education in agriculture may be within the reach of ordinary people. Of course, we award scholarships and all that.

Regarding the university in Andhra Pradesh, the Agriculture Minister of that State is working on that Bill. As the hon. Member has herself suggested, the matter is being examined by the Planning Commission also. Since Andhra Pradesh is one of the most enlightened States of India in regard to agriculture and so many other things, I hope there would not be much difficulty in getting the agricultural university at the proper time.

Coming to intensive agricultural district programmes, some hon. Members doubted the efficacy of that programme. One hon. Member said that it would not be easy to bear the expenditure. As I said about LIC, this has been the biggest drawback of our agriculture. When we think of agriculture, we think in terms of thousands or lakhs, but when we think of industry we always think in terms of millions and crores. When we talk of improvement of agriculture and the agricultural production programme, there should not be any such limit on expenditure. Nobody should think that it should be the lot of agriculturists to be clad in torn and tattered cloth. When you start thinking in that way, the reply will be the package programme. Because, within the shortest span of two years there has been an increase of over 15 per cent of production in all the agricultural districts. In some of the districts it has gone up by 21:3 per cent and even more. Therefore, we have decided to establish more intensive agricultural districts—40 for paddy and 100 for millets, pulses and other crops.

One hon. Member referred to landless workers and the land reform programme, and the hon. Member concerned, Shri J. B. Singh is present here. I must point out to him that in his State of Uttar Pradesh about 1:5 million sub-tenants are now having direct contact with the State and the intermediaries have been entirely eliminated. In the entire country over two crores of tenants have come into direct contact with the State. We want to see that the reform programme is carried out wherever it is possible.

Regarding landless labour our plan is to settle 7 lakhs of families on an area of 50 lakhs of acres, involving a total expenditure of Rs. 7 crores, and the pattern of financial assistance to the State Governments for the Centrally sponsored scheme formulated for this purpose is: (1) the Central Government share the reclamation cost equally with the State Government, subject to a ceiling of operational Rs. 150 per acre of land allotted and (2) the net expenditure on expenses involving resettlement is admissible to the extent of 100 per cent, 75 per cent as grant and 25 per cent as loan, subject to a ceiling of Rs. 500 per family.

Some hon. Members have stated that there has been much expenditure on staff and there is over-staffing in the Agriculture Ministry. I would like to state the position of staff here.

On 1st April, 1960 there were 44 technical gazetted officers and 84 non-technical gazetted officers. The number has gone up to 53 technical gazetted officers and 84 non-technical gazetted officers on the 1st March, 1963. As regards other staff, in April 1960 the number was 49 technical and 541 non-technical; it has gone up to 62 technical and 540 non-technical on 1st March, 1963. There were 244 Class IV staff in 1960 and that has gone down to 237. There is an economy committee which is constantly reviewing everything.

But I must warn the House. Though I lead a very simple life, I am not a believer in austerity of a wrong conception. When you want to increase agricultural production or when you

[Dr. Ram Subhag Singh]

want to fight a war, these little things need not be taken into consideration. Some people say that unless and until you set up an army of competent agricultural officers and provide them with facilities to go wherever they like to, you would not be able to increase production. If today the price of jute or cotton fell down, they will have to rush to the place. Competent officers shall have to be provided. They must be in an adequate number; otherwise, there would not be any hope of increasing production. The talks about electricity and other things are talks which are not going to make any contribution to the national emergency.

In this connection I very much like the suggestion of Shri Bibhuti Mishra, namely, that there should be an all-India service of agricultural officers. I notice everywhere that they are second class officers and they do not have any powerful position in their districts or blocks or States. Unless and until they are provided with responsibility and freedom to work, this programme will suffer. Therefore, I want that there should be an all-India agricultural officers' service as also an All-India Forest Service. The Dehra Dun Institute of forests and IARI are contributing the most in regard to training or bringing out first-class graduates to handle our forest and agricultural work.

I am glad that my hon. friend, Shri Hari Charan Soy, who comes from the Chhota Nagpur area has drawn our attention to the forest problem. Some other hon. Members also pointed out about this fuel shortage. I do recognise that in our programme the hilly areas must be given priority because in a way it was the lack of development in our hilly areas that brought difficulty to us. We must develop the Chhota Nagpur area because both in Orissa and Bihar the Saranda Forest is one of the best *sal* forests in the world and is perhaps the best in our country. The requirements of the people who reside there must also be met. We shall see that their difficulties in regard to setting up some test-work or about sending some rice etc., the difficulties that the hon. Member pointed out, are minimised and proper help is sent to that area.

It is in this connection that we are also holding a seminar at Simla where representatives from NEFA to Ladakh, the Himalayan areas and all the other hilly areas, have been invited and which the hon. Minister of Food and Agriculture will inaugurate on the 12th of next month.

Then, Malhotraji was very right in pointing out the difficulties of fruit growers and he said that this is one of the best protective foods, like fish, milk and other things. In a way, it is the best thing because there is no bar to eating fruit by anybody. So, whatever is possible will be done by this Ministry to see that fruit cultivation is encouraged. About that hill seminar also this will be one of the most important features of that seminar.

In regard to establishing of a fruit research centre, that matter also will receive our attention.

He also pointed out about the World Agriculture Fair. He said that the prizes should be announced in time. Shri Bibhuti Mishra and some other Members also said it. That thing is being attended to as the committee of the House recomended. I do not want to say anything. But Shri Malhotra wanted that I should give the facts about reality. He said, it was the former Agriculture Minister—he named him also—who presided over the destinies of that organisation. According to the constitution of that organisation, the Agriculture Minister used to be the President and I do not know whether that constitution had been changed. We do not have any paper. Today, there is not even a room there in the Agriculture Ministry, in Krishi Bhavan. They are out from

there. But I do not know about the constitution of that organisation, whether it has been changed.

About this fuel problem, this is a big problem and here also I accept Mr. Soy's suggestion that the afforestation work should be done in those areas which are plan areas. We are doing that also in a way. Under the head 'Forest' we are going to spend Rs. 51 crores during the Third Five Year Plan and about Rs. 275 lakhs on quick growing species. We shall set up a suitable number of nurseries also and they are being set up. We have also taken a scheme, on the Rajasthan canal, to afforest both sides of the canal which is about 38 miles in length. These are some of the programmes.

I do not want to take much time of the House because most of the hon. Members are wanting to participate in the debate. But I again assure the House that we are not complacent and we shall see that all possible efforts are made in regard to increasing agricultural production and in regard to keeping the targets that have been laid down.

श्री जगदेव सिंह सिद्धान्ती (झज्जर) : बहुत वर्ष नहीं हुये यह कहा जाता था "उत्तम खेती, मध्यम वाण, निखिद चाकरी, भीख नदान" । आज चाकरी को सब से उत्तम माना जाता है और जो खेती है वह आज सब से निखिद हो गई है । ऐसा समझा जाता है कि जिस को कोई और धंधा न मिल सके, उस बच्चे को खेती में डाल दो । इसका कारण क्या है ? इसका कारण यह है कि खेती की तरफ उतना ध्यान नहीं दिया गया है जितना दिया जाना चाहिये । जैसे हमारे राष्ट्र रक्षा के लिये सेना के लोगों का होना अत्यन्त आवश्यक है, उसी तरह से दूसरे दर्जे पर यह खाद्य सामग्री आती है । पहले भी यह कहा जाता था :

कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व बहुमन्यमान :

अगर यह चाहते हो कि हम धन में रमण करें तो खेती करो । पहले सम्पत्ति और खेती दोनों का जोड़ा था । आज खेती और निर्धनता का जोड़ा हो गया है । इसका कारण यह है कि जिन बातों पर हमें ध्यान देना चाहिये था उन पर हमने ध्यान नहीं दिया ।

मैं किसी पर भी कोई आक्षेप नहीं करना चाहता हूं । मैं तो केवल मात्र आपके सामने कुछ सुझाव ही रखना चाहता हूं । खेती के लिये तीन चीजों की आवश्यकता है, भूमि, गौ और जल ।

डा० मा० श्री० अणे (नागपुर) : जंगल भी ।

श्री जगदेव सिंह सिद्धान्ती : भूमि में आ जाता है ।

भूमि अच्छी हो, बोना जोतना सब कुछ ठीक हो तो अन्न अच्छा होगा । गौ तो खेती का प्राण समझी जानी चाहिये । मैंने कृषि विभाग की रिपोर्ट को पढ़ा है । उसने कहा है कि हमने गोसदन खोले हैं, गोशालायें खोली हैं और इस तरह इस तरफ भी ध्यान दिया है । लेकिन कहा गया है :

गावो विश्वस्य मातर :

संसार भर की माता तो गौ है । असली जननी माता तो डेढ़ दो साल तक ही दूध पिलाती है और गौ माता तो सौ वर्ष तक जब हम बूढ़े भी होते हैं, दूध पिलाती है । गौ उसको भी दूध देती है जो कसाई उसके गले पर छुरी फेरता है । प्रातःकाल वह दुष्ट हत्यारा गौ का दूध पीकर उसको काटता है और गौ इतनी सीधी है, इतनी अनघा है कि उसको भी दूध पिलाती है । इसलिये अगर आप मुल्क की रक्षा करना चाहते हैं तो सब से पहला और आवश्यक कर्त्तव्य आपका यह है कि गौ-हत्या पर आप पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दें । यह बहुत आवश्यक है । गौ से अकेले दूध

[श्री जगदेव सिंह सिद्धांती]

ही नहीं मिलता और भी कई चीजें मिलती हैं। अगर और कुछ नहीं कर सकते हैं तो कम से कम बहुत नहीं तो दस साल के लिये गौ हत्या बन्द तो कर ही सकते हैं। इस अस में भी इतनी गायें मरेंगी कि आपके चमड़े की जरूरतें पूरी हो सकेंगी, हड्डी, खुर आदि भी उसकी आपके काम में आयेंगी, सींग भी काम में आयेंगे और उसके जीवित रहते सिंथरी वगैरह कारखानों की आपको आवश्यकता नहीं होगी। अगर देश में खूब गायें हों तो गोबर हमें काफी मिल सकता है और उसके गोबर की खाद शुद्ध खाद होती है और उस में किसी भी तरह का कोई दोष नहीं होता है। वह खाद हमारी खेती बढ़ाने में बहुत ज्यादा सहायक हो सकती है। गोबर के अन्दर वे सारे तत्व उपस्थित रहते हैं जो कि हमारी खेती को बढ़ाते हैं। आज हमने गौ को खोया, गोबर को खोया और इसका नतीजा यह है जितनी बाहर की गन्दगी है, वह सारी हमारी सब्जी भाजी में आ गई है। सुबह के वक्त आप सब्जी मंडी में जाकर देखें जो गोभी के फूल होते हैं, जो इस तरह के बने हुये होते हैं उसके अन्दर विष्टा लिपटा रहता है। इसका क्या कारण है? इसका कारण यह है कि हमने अपनी असली चीज को खोया और नकली चीज को अपनाया। इसी फूल को हम बढ़िया समझने लग गये हैं।

अब मैं जल की बात को लेता हूं। सिंचाई के लिये जल आवश्यक है। भगवान दया करे, ठीक समय पर वर्षा होती रहे तो बहुत कुछ काम ठीक बनता रहता है। नहरों से सिंचाई भी बहुत आवश्यक है। खेती की बात ही मुझे करनी पड़ती है। हम ने हरयाणा क्षेत्र वालों ने माननीय प्रधान मंत्री जी को, कृषि मंत्री जी को, सिंचाई मंत्री जी को और पंजाब को भी लिख कर दिया है कि हमें नहरों का पानी चाहिये, हमारी पिछली दोनों फसलें समाप्त हो गई हैं, खेती बरबाद हो गई है। अब भी लोगों का ईख का बीज जमीन में पड़ा पड़ा है, लेकिन क्या हो सकता है अगर पानी न मिले। अभी एक सैनिक बलिदान स्मृति दिवस रोहतक में नौ मार्च को मनाया गया था। आदरणीय प्रधान मंत्री जी वहां गये थे। उन्होंने हरयाणा के वीरों की प्रशंसा की और साथ ही यह भी कहा कि खूब खेती उपजाओ। एक किसान ने जो ७०–७५ वर्ष की उम्र का था, खड़े हो कर कहा कि पानी चाहिये। मेरी गर्दन शर्म से झुक जाती है, उसको सुन कर जो जवाब हमारे प्रधान मंत्री जी ने उस वक्त दिया। उन्होंने कहा कि क्या मेरी जेब में पानी है। भाई शिव जी की जटाओं से गंगा आ गई, क्या प्रधान मंत्री जी की जेब से नहर भी नहीं निकल सकती है।

निकल तो सकती है लेकिन भावना चाहिये। इस तरह की चीजें हैं, बताइये बिना इसके कहां से खेती हो सकेगी? उसी समय तत्काल उत्तर दिया सरदार प्रताप सिंह कैरों ने जो कि पंजाब के चीफ मिनिस्टर हैं।

Mr. Deputy-Speaker: The hon. Member may resume his seat for a minute.

There is a large number of speakers. I would like to know if the House is prepared to sit for a longer time. We can sit up to 7 P.M., and each Member can take about ten minutes; then, six Members will have chance to speak. Is the House agreeable to this?

Several Hon. Members: Yes.

Shri Yashpal Singh: We can sit up to mid-night. This is emergency time.

Mr. Deputy Speaker: We shall see. If the House is willing I have no objection

श्री जगदेव सिंह सिद्धान्ती : हमारे पंजाब के चीफ मिनिस्टर ने फरमाया कि तुम कुएं खोदो, में बिजली दूंगा । लेकिन वहां खाली कुआं खोदने से क्या फायदा ? मान भी लें थोड़ी देर के लिये कि वहां कुएं खुद गये, लेकिन वहां कुएं का पानी काम क्या देगा क्योंकि वहां का पानी बिल्कुल खारी है ? रेवाड़ी का हलका जितना है, झज्जर तहसील का हलका जितना है उसका पानी अच्छा नहीं है । वहां पर कुएं का पानी काम नहीं दे सकता । वहां केवल नहर ही काम दे सकती है । इस तरह की चीजें अत्यन्त आवश्यक हैं । यहां जो कृषि मंत्रालय के मंत्री बैठे हुये हैं उनके प्रति हमारी शुभ भावनायें हैं और हम यह विश्वास भी करते हैं कि उनके हृदय के अन्दर यह भाव है कि हमारी खेती में अधिक उपज हो । इस नाते से में कुछ सुझाव देना चाहता हूं, आक्षेप की दृष्टि से नहीं ।

यहां पर बहुत सी बातें ऐसी हो रही हैं जिनमें से कई में शायद यह मालूम पड़े कि में बहुत विचित्र रूप से बोल रहा हूं, लेकिन करूं क्या, मुझे बोलना पड़ता है, । हमारे देश में मेले लगते हैं । मेले के अन्दर इनाम बांटे जाते हैं । जिला हिसार की एक गौ आई जिस को फर्स्ट प्राइज दिया गया, रोहतक की एक भैंस प्रथम आई, लेकिन उनको इतना इनाम नहीं दिया जाता जितना एक मुर्गी को दिया जाता है । अजीब तमाशे की बात है । मुर्गी को तो इतना इनाम और गाय और भैंस को कोई अच्छा इनाम नहीं । इस के आगे होगा क्या ? लोग कहते हैं कि अपनी आदत बदलो । इस रिपोर्ट में भी है कि लोग अपने खाने की आदत को बदलें । यह भावना सन् १९४८ से चली आ रही है । । कहा गया कि खुराक की आदत बदलो । यानी मांस खाओ । यह बहुत भयंकर बात है । जो भाई मांस खाते हैं वह उनका ही मांस खाते हैं जो खुद मांस न खाकर घास खाते हैं । उन्होंने शेर का मांस नहीं खाया, भेड़िया का मांस नहीं खाया । वह तो उन्हीं का मांस खाते हैं जो कि घासाहारी हैं और उसी प्रकार से दूध देते हैं अपने बच्चों को जिस प्रकार से सिंह भी अपने बच्चे को दूध पिला कर पालते हैं । मुर्गियों से होगा क्या ? मुर्गी कितनी गन्दी चीजें खाती है यह भी एक तमाशे की बात है । में आज डा० राम सुभग सिंह से प्रार्थना करता हूं कि वे देखें कि मुर्गी क्या खाती है या सुअर क्या खाता है और इन्हीं जानवरों के लिये जनता से कहा जाता है कि उनको खाओ ।

इसी तरह से मछली का प्रचार चल पड़ा है । जब भी यहां स्टेशन पर जाते हैं तो देखते हैं कि उसका प्रचार बहुत तेजी से हो रहा है । छोटी छोटी शीशियों में पानी में कुछ मछलियों को डाल कर कहते हैं कि मछली का बीज ले लो । क्या यहां मछली वगैरह चल सकती है ? बम्बई, कलकत्ता आदि जो स्थान समुद्र के पास हैं वहां आप इसको कर सकते हैं । हमारे हरयाणा में इसके प्रचार से क्या होगा ? हमारे यहां तालाबों में सिंघाड़े बोये जाते हैं । लोग सिंघाड़ों को खाते हैं । कच्चा भी खा लिया और पक्का भी खा लिया, शाक भी बना लिया, औषधि भी बना ली, मिठाई भी बना ली । वहां पर सिंवाड़ा खूब पैदा होता है । सिंघाड़े की जगह लोग कहें कि मछली बोओ तो किस तरह से हो सकता है ? जहां से में आता हूं में वहां पहले कभी नहीं देखा कि मछली बिक रही हो इस तरह से छोटे छोटे टुकड़े कर के । जो दूसरे के प्राणों को लेकर अपना पेट भरता है उसके लिये बड़ी कठिन समस्या है कि उसका जीवन बना रहे । इसलिये यह आवश्यक है कि हम दूसरों का भी, पशुओं का भी ध्यान रक्खें । जितने ही पशु अधिक होंगे उतना ही घी, दूध अधिक मिलेगा । जंगल भी होने चाहियें । एक किसान के पास अगर बीस बीघे जमीन हो तो सरकार की तरफ से उसको आदेश होना चाहिये कि दो बीघे वह गोचर भूमि के लिये छोड़े । उससे लकड़ी भी मिलेगी, गौएं भी चरती रहेंगी, सब काम

[श्री जगदेव सिंह सिद्धांती]

काज होगा और खेती भी ठीक होगी। सारी चीजें शुद्ध होंगी और पशु पूरी तरह से काम दे सकते हैं।

खाद्यान्नों पर जो सट्टा होता है वह भी बन्द होना चाहिये क्योंकि वह जुआ है। उस का बाजार भाव बदलता रहता है। यह बाजार भाव भी बड़े अचम्भे की चीज है। किसान अपनी गाड़ी लेकर मंडियों में जाते हैं। उनके चारों तरफ कौवों की तरह इकट्ठे होकर व्यापारी लोग बोली बोलते हैं एक दो तीन, एक दो तीन। सारी दुनिया का यह कायदा है कि सारे व्यापारी लोग, सारे आदमी अपनी अपनी चीज का मौल तोल खुद करते हैं और कहते हैं कि हम इस भाव से बेचेंगे, लेकिन एक किसान ऐसा है जो किसी भी अपनी चीज का मोल तोल खुद नहीं कर सकता। दूसरे लोग कहेंगे कि इस भाव बिकेगा। जितनी भी किसानों की चीजें हैं उसकी नीलामी होती है। सारे देश में इस के लिये कोई दूसरी पद्धति नहीं है। आज यहां पर स्थिति यह है कि एक किसान अपनी गाड़ी भर कर मंडी में ले जाता है तो फिर वह उसको उसी तरह से वापस नहीं लाता है। जो भी दाम उसको मिलता है उससे वह कपड़ा, लोहा आदि लेकर कन्धे पर डाल कर आता है। जो गाड़ी पहले भरी जाती है वह सारी की सारी खाली आती है। इसकी ओर हमारे मंत्री महोदय को ध्यान देना चाहिये।

कल भी लोक-सभा में ग्रामीण महिलाओं के संबंध में प्रश्न आया कि उन के ऊपर से काम का भार कम करना चाहिये। कल भी मैं ने इस विषय में निवेदन किया था कि किसान का काम तब चलता है जब सात वर्ष के बच्चे से लेकर सत्तर वर्ष के बुड्ढे तक काम में लगे रहें। तभी जाकर यह हालत पैदा होती है कि वह अपना गुजारा कर ले। जितने लोग यहां किसान वर्ग से आये हैं सब हृदय पर हाथ रख कर बता सकते हैं कि खेती के काम के कारण कोई अपने बच्चों को कालेज में नहीं पढ़ा सकता है, जब तक कि उनके पास कोई और धंधा न हो। एक बुड्ढा कह रहा था कि अगर कोई यह सोचे कि खेती की पैदावार से वह अपने बच्चों को ऊंची शिक्षा दिला सके तो यह बिल्कुल मानने योग्य बात नहीं है।

यह ठीक है कि कहते हैं कि भाव कम कर दो किसान के लिय, लेकिन यह भी तो आप को ध्यान रखना चाहिये कि किसान जो सामान लेता है चाहे लोहा हो, चाहे सीमेंट हो चाहे कपड़ा हो, या और चीजें हों, उनके भाव भी उसी अनुपात से कम होने चाहियें। बात तो हम बहुत करते हैं लेकिन इसके लिये काम कुछ नहीं किया गया।

दूसरी चीज यह है कि प्रचार के लिये आपने लिखा है कि आप हिन्दी में करते हैं। यह और अधिक किया जाये। किसान पढ़ेगा तो तब जब कि उसको उसकी भाषा में दिया जाये। वहां अगर आप अंग्रेजी में देते हैं तो उसका क्या फायदा ?

डा० राम सुभग सिंह : हिन्दी में देना चाहिये।

श्री जगदेव सिंह सिद्धान्ती : मैं आपका आभारी हूं कि आपने इसको स्वीकार किया। आपने जो प्रचार किया है आप उसको ज्यादा बढ़ा कर लोगों को और उत्साहित कीजिये।

इसके साथ ही मैं आपको ध्यान दिलाऊं कि किसानों के ऊपर जो अनिवार्य बचत के रूप में टैक्स लगा है लगान का पचास प्रतिशत, यह उनके लिये बहुत भारी बोझ है। अनेक किसान इस प्रकार के हैं जो पहले बीज तक मोल लेते हैं कर्ज पर। वे बीज को कर्ज पर मोल लेकर बोते हैं। आप बतलाइये कि वह पहले कर्ज को पाटने के लिये पैसा देंगे या कि बचत में। उन्हें अपने बच्चों की

पढ़ाई लिखाई करानी है, बतलाइये वे कहां से उनकी पढ़ाई लिखाई करा सकेंगे । यह बड़ी कठिन समस्या है और अनिवार्य बचत योजना का जो टैक्स है यह बहुत बाधक है, उनके लिये बहुत हानिकर है ।

साथ ही हम देखते हैं कि किसानों में कुछ कुरीतियां भी पाई जाती हैं । सौभाग्य है कि इस समय सरकार भी उनकी ओर कुछ ध्यान दे रही है । अभी सर्वखाप पंचायत बड़ोत में हुई थी । उस में जैसा माननीय मोरारजी देसाई जी चाहते हैं उसके अनुसार यह रक्खा गया कि दिल्ली के चारों ओर १०० मील की एरिया में जो सर्वखाप पंचायत के लोग हैं उन्होंने सोने के जेवरों का उपयोग बिल्कुल बन्द कर दिया है ।

उपाध्यक्ष महोदय, मैं आपका बहुत आभारी हूं कि आपने मुझे समय दिया । मैंने कुछ सुझाव रक्खे हैं । वे मैंने सच्चे हृदय से रक्खें हैं, आक्षेप की दृष्टि से नहीं । और मैं आशा करता हूं कि उन पर ध्यान दिया जायेगा ।

Mr. Deputy-Speaker: Shri P. R. Patel. Each hon. Member will have ten minutes.

Shri P. R. Patel: I thank you for giving me ten minutes, but I fail to understand why at the end of the day there should be a cut when everybody was allowed to express his views taking more time in the beginning.

The question before the country is whether we should feed the country by importing foodgrains from outside or whether the country should become self-sufficient in this matter some day. Judging from the policy that the Government follows, I do not think the country will be self-sufficient in food for a hundred years, or perhaps a thousand years. The policy is very defective.

16 hrs.

In 1962 alone we imported foodgrains to the tune of Rs. 141 crores. In 1961 it was Rs. 129 crores and in 1960 Rs. 192 crores. We import not only foodgrains, but also cotton. Import of cotton in 1961-62 was Rs. 62 crores, in 1960-61 Rs. 81 crores. Are we going to lose our money every year by importing foodgrains and cotton. How shall we be self-sufficient? We shall have to depend always on foreign imports. I have reasons for saying it.

The policy that we follow today is suicidal to the development of agriculture. We promised farmers in the Third Plan that they would be given remunerative minimum prices. That is in the book. The Planning Commission talks of the target. It put a target of 100 million tons of foodgrains by the end of the Third Plan. The target is all right, but they also said that price incentive should be given to achieve the target. The Planning Commission said that the agriculturist should be assured of a remunerative minimum price and that too at the time of or before the sowing season. Is it done?

With all good feelings, the Minister and the Ministry are helpless in the matter because the Planning Commission dictates. The Planning Commission no doubt plans.

Shri A. M. Thomas: In this matter there is absolutely no difference of opinion.

Shri P. R. Patel: Then, what is the difficulty in assuring the agriculturist minimum remunerative prices? What agency have you created for fixing the remunerative minimum price? Have you created any agency up till now, you tell me. If you have not created, either you are not willing to implement what has been said in the Third Plan, or something comes in your way, you must admit that.

An Hon. Member: It should be explained also.

Shri P. R. Patel: Nobody is going to explain.

Now, I may refer to the prices of foodgrains especially wheat. With a base of 100 in the base year 1952-53, the price of wheat in 1959-60 was 91. It was 89 in 1960-61; 92 in 1961-62 and 88 in January 1963. This policy of not giving the remunerative price to the agriculturist has put the Ministry in a position whereby it has to feed the country by imports to the extent of three million tons in 1962, three million tons in 1961 and four million tons or even more in 1960. Are we going to impoverish our country by importing wheat for years together. We cannot allow people to die. Unless we look to the agriculturist for more agricultural production and not to America and Canada, the position will not improve. The import of wheat from outside has an impact on the price of the local produce. In that way shall we be encouraging the agriculturists here to produce more wheat. If we follow the present policy, shall we be self-sufficient in food even after hundred years? The important thing is that the prices of other things have increased while the wheat prices have not, during the last 12 years. Where there is no electricity, people use crude oil engines and pumps. What was the price of crude oil in 1951 and what is its price in 1962, after the new taxes?

Mr. Deputy-Speaker: Ten minutes are over.

Shri P. R. Patel: Sir, alow me two minutes more. The price of crude oil has doubled today, because of new taxes and other things. We have allowed increase in the price to the crude oil producers. The price of wheat has come down. The prices of engines and pumps have increased by more than fifty per cent, while the wheat price has come down. Even the prices of iron and steel required for agriculture had increased by fifty per cent. Take any item, except wheat—textiles or whatever you like. Take taxes, such as education cess or any other tax which is a burden on the agriculturist. Would not all these things add to the price? However, the hon. Deputy Minister was pleased to say: nothing comes in the way of fixing minimum remunerative prices. Is the Ministry in a position to say that the present price of wheat is remunerative? If it is not remunerative, what has been done? Therefore, my submission is that this requiries a change in outlook and policy. The change that I suggest in the policy is this. In agriculture, the policy that should be followed is to look to the agriculturist and not to any foreign country for imports. Give the agriculturists more price, and they will produce more. Otherwise, the position will be the same.

Shri Shivananjappa (Mandya): Mr. Deputy-Speaker, Sir, I rise to support the Demands for Grants under the Ministry of Food and Agriculture. While supporting them, I wish to congratulate the Ministry on some of its achievements. This Ministry is entrusted with the task of making the avocation of 90 per cent of the people of this country more remunerative. In other words, this Ministry has set upon itself the task of bringing more lands under cultivation, giving more irrigational facilities, increasing the *per capita* yield from the crops and also securing better prices for the farmers for their produce.

This Ministry is specially to be congratulated for more than one reason. Appreciable efforts have been made to attain self-sufficiency in foodgrains and also to make the life of the farmer more secure and better. Increased agricultural production is essential for making, supporting and sustaining the tempo of progress in every sector of the economy. That is why, in all our Plans agriculture has been given the top priority. In the first Plan also one of the ojectives of the Plan was to attain self-sufficiency in foodgrains and to increase agricultural production so as to support the requirements of the industries and export.

Under the emergency, agriculture requires a new orientation and it re-

quires a new urgency. The entire progress and prosperity of the country depends upon the successful working of this Ministry. In the third Plan, a review of the state of agriculture discloses that during the period between 1949-50 and 1960-61, the output of agricultural commodities increased at 384 per cent, the rate of increase in the case of foodgrains being 3.73 per cent. The rate of increase in the area under cultivation has been 2·08 per cent and in productivity per acre, 1:54 per cent. Even in the year under review, there is a marked decline in the production of cotton, oil-seeds and sugarcane which provide the raw material to two of India's foremost industries, namely, textiles and sugar. Even after 12 years of freedom the country has to import about Rs. 140 crores worth of foodgrains. There was no overall advance in agricultural production in the first year of the third Five Year Plan and in the second year also the progress has not been satisfactory. It is, therefore, evident that the rate of progress in agricultural production has been slow, and in order to achieve an increase of six per cent per annum, as envisaged in the third Plan, an all-out effort is essential.

The unsatisfactory affairs are due to a number of factors. First of all, there has been the non-availability of nitrogenous fertilisers in adequate quantities. The third Plan target for the consumption of nitrogenous fertilisers is one million tons. The total supply in 1961-62 was 2·81 lakh tons and the estimated supply in 1962-63 is put at 4·04 lakh tons. The target for 1963-64 is five lakh tons. The quantity actually despatched during the first nine months of 1962-63 was 2·37 lakh tons of nitrogen, or 55 per cent of the target for the year. The total quantity available during 1963-64 is likely to be of the order of 4.5 lakh tons due to the shortage of foreign exchange and a slight fall in internal production. I urge that nitrogenous fertilisers in adequate quantities must be somehow found in addition to green manure and compost.

Sir, further, in order to implement successfully the emergency programmes as also to intensify agricultural production it is necessary to strengthen the agricultural extension schemes. The village level workers must concentrate more upon production plans of the villages rather than the administration of panchayats, because at present the village level workers are now engaged more in the administration of the panchayats than in production. So, they must concentrate more upon production. To achieve this an effective coordination of plans and action is necessary at all levels.

There is at present a gap of 4 million acres betwten the irrigation potential of major and medium projects and their actual utilisation. The main reason for this gap is the want of proper feeder channels and spares population under these projects. Under Tungabhadra project, much water has yet to be utilized by the cultivators. A proper climate must be created for the maximum utilization of water.

The progress as regards soil conservation and dry farming has been rather slow. The National Development Council has raised the target for soil conservation from 11 to 16.5 million acres. The actual achievement under soil conservation was 1.3 million acres in 1961-62 and 1.5 million acres in 1962-63. There is thus obvious need for stepping up the programme of soil conservation as well as dry farming in order to achieve the Plan target. The Government must think of evolving a national policy for soil conservation. Seed multiplication farms are there, but it is necessary to evolve improved varieties for all crops.

Another contributory cause for low agricultural production is absence of proper crop planning. No doubt the Government have thought upon package areas for intensive produc-

[Shri Shivananjappa]

production of certain commodities. I am sorry to state that there is no crop-planning for growing sugarcane. Sugarcane is a tropical and sub-tropical crop. It is unfortunate that large tracts of lands are devoted to growing sugarcane in U.P. and Bihar. In spite of the encouragement and incentives given to sugarcane cultivation in U.P. and North Bihar, there is no marked improvement either in the quality or in the yield per acre. The average yield remains 9 to 11 tons per acre. Recently, sugar factories in U.P. and Bihar have to be closed down for want of sugarcane. The recovery of sugar is about 8 per cent. Now since the sugarcane price is linked up with recovery, both the quality and yield per acre are important. Otherwise, the cane-growers will suffer. Hence there is the paramount need to encourage new sugar factories in the peninsular India and south.

In our own State of Mysore, the paddy price has gone far below economic levels and this has hit hard the ryots. The prices are not likely to go up either in the immediate future. Mere announcement of paddy procurement price is not enough. The Government must go into the open market for purchasing.

My district of Mandya in the State of Mysore is a package programme district. The district coordination committee has submitted to the Government of India through the State Government minor irrigation schemes, amounting to about Rs. 150 lakhs. If this is done, it will provide water to another additional 30,000 to 40,000 acres. I request this Ministry to accord sanction to it.

Mr. Deputy-Speaker: Shri D. D. Puri—absent. Shri Karuthiruman.

Shri Karuthiruman (Gobichettipalayam): Mr. Deputy-Speaker, Sir, I thank you very much, because at least at the fag end, I have got a chance to speak, coming from Madras State.

Mr. Deputy-Speaker: Last but not least.

Shri Karuthiruman: One reason which I wanted to participate in this discussion is this. An hon. Member of this House from Madras State has enlightened the House; he is Shri Muthu Gounder and the party he belongs to is DMK. I am very thankful to him because he said that the present price that has been fixed is unfair and he wanted more price to be fixed. In the election campaign of the so-called D.M.K. Party they promised three Madras measures of rice per rupee. That comes to about five kilos per rupee.

Shri Muthu Gounder: We did proclaim that, but we were not given an opportunity to rule in the Madras State.

Mr. Deputy-Speaker: Order, order. The hon. Member had his chance.

Shri Karuthiruman: Sir, the way in which he interrupts confirms that they did proclaim like that. Now they say that the price should be remunerative. According to their price policy it will be only Rs. 7 per maund of rice. They go to the public and say: "Down with the Congress; we will give you five kilos of rice per rupee".

Shri Muthu Gounder: We would have allowed enough subsidy and seen to it that the poorest section got three measures per rupee.

Shri Karuthiruman: At least here in the Lok Sabha he has said that the present price as fixed is very low and that it should be increased. I thank him for the sentiments expressed by him here.

He said that he was producing 4000 pounds. As a matter of fact, I am producing 5000 pounds for more than two decades. What is that due to? This increased production of 4000 and 5000 pounds in the Madras State is practically due to the efforts of

the Agricultural Research Institute in Coimbatore. I really pay credit to that institute and other institutes in our States and in the Centre. They have produced such strains as Co. 16, Co. 19 and Co. 25 of paddy that it has been possible for us to produce 4000 pounds and 5000 pounds of paddy. Hon. Members should take note of that. It has not been because of our own efforts and because of our indigenous ability that we have been able to achieve this. It was only because of the Agricultural Research Institute at Coimbatore. The credit should go to them for our producing 5000 pounds. Not only the Madras States but all States in India should be grateful to the agricultural research institutes for the good work that they are doing.

Shri Muthu Gounder: In my field the yield was more than 7000 pounds year before last year.

Shri Karuthiruman: Sir, agricultural education is so very necessary that there should be more agricultural universities. I request the hon. Minister to establish one such university in the State of Madras.

The research work that is being done in the Indian Agricultural Research Institute is tremendous. They have done marvellous work. As my time is very short I do not want to go into the details, but I will only pay my tribute to them.

There is one thing that I want to point out. The revenue officials get a higher status than the agricultural officers. That by itself creates a sort of inferiority complex in the minds of the agricultural offictrs and they do not put their full effort for the development of agriculture. A District Agricultural Officer is of more value to the nation and to the farmers than any other revenue officer sitting in a four-walled room doing less work and demanding more emoluments. Sir, in our independent country we should see that all technical people in the agricultural department get equal status with the IAS officers. An all-India service be created; otherwise there is no incentive for them to do their best.

The Agricultural Department has reached this status because of the shortage of foodgrains. Had there not been shortage of foodgrains shortage of cotton and shortage of other things, the Government would not have cared for the agricultural department at all. Because they want food, they want to do more research and that is why the Planning Commission and the Government are caring so much for the agricultural department.

I would suggest, Sir, that the administrative side of this department should be separated from the executive side. What I mean to say is that administrative work is vested with technical People. Technical people are made to do the work of ordinary clerks with the result that their ability to do higher work is wasted. They are not being fully utilised and they are not given an equal opportunity to work on the technical side.

Sir, the shortage of paddy is only 3.9 lakh tons whereas there is a shortage of 32 lakh tons in the case of wheat which we are importing. The shortage of wheat is there because—so far as my knowledge goes, because I have travelled from Madras to Delhi, a distance of about 1500 miles—there is only extensive cultivation and not intensive cultivation under wheat crop. I think a majority of the wheat crop depend on dry cultivation.

An Hon. Member: Not everywhere.

Shri Karuthiruman: I said that a majority of them depend on dry cultivation. If they take to wet cultivation and also intensive cultivation, this shortage would be wiped off very easily. I would request the agricultural research institutes to induce people to use special strains and high-breed strains. Also, they should attach more importance to quality

[Shri Karuthiraman]

than to quantity. Their aim should be to produce more in better quality and a large quantity.

Then as I have suggested earlier, the supply of inorganic manures such as fertilizers should be stopped, because the application of the fertilizer, though it will help in raising a bumper crop, will not help to maintain the fertility of the soil. Encouragement should be given only for the application of organic manures and not inorganic manures. In New Zealand they made an experiment in a district with both organic and inorganic manures. In one field they applied only organic manures and in another only inorganic manures. Then they tested the foodgrains of both the fields on animals. It was found that animals fed on food grown by applying inorganic manures were susceptible to various kinds of diseases whereas the animals fed on food grown by applying organic manures were well-bred and lived quite long. Therefore, my advice to the Agricultural Department is that they should encourage only the use of organic manures in abundance, and not inorganic manures, because the fertility of the soil would be lost by continuous application of inorganic manures, with the result that while there will be increase in production, the quality will go down.

Coming to food production, I know that the Minister of Food and Agriculture is a dynamic man, but I feel that he should be more dynamic and take more interest in fixing the price of foodgrains. So far as the price of rice is concerned, it is not only unjust, but it is impracticable. I can very easily prove it. Also, there is confusion between the floor price and the fair price. The question of floor price arises when there is excess of production. When we are short of production, fair price is necessary so that the farmer will have some incentive to produce more.

There is a proverb in rural side that "marriage is a cure for lunacy and the lunacy will be cured after marriage". The price of agricultural produce should be fixed only when it is fixed for other commodities. If the prices of other commodities are controlled, I agree on behalf of the agriculturists that the prices of foodgrains can also be controlled, but not otherwise.

I would again repeat that the floor price is creating great confusion. There should be a fair price to the farmer. At the same time, the consumers should get it at a reasonable price. If we supply rice to the consumers at the rate of 1½ kilos per rupee throughout India from Cape Comorin to Kashmir, I think everybody would be happy. It means Rs. 25 per maund. It should be available to the consumer at that price. If the trader is not doing that business honestly, it is better that Government takes to State trading so that the producer gets a fair price of at least Rs. 21 per maund and the consumer need not pay an unnecessarily high price. We should see that the interests of the peasantry are protected and we should not leave them to the tender mercies of unscrupulous businessmen.

Lastly, Sir, I request the hon. Minister to take serious steps to see that the interests of the peasants are protected. The bold peasantry, the country's pride, when once destroyed can never be supplied. Thank you, Sir.

Shri Solanki (Kaira): Mr. Deputy-Speaker, I thank you for giving me this opportunity to speak on this debate. From this morning I have been hearing various arguments from different groups of Members regarding this debate, but it was towards the evening that I found that we were touching the right spot of this problem of food and agriculture.

It is a well-known fact that agriculture is the backbone of our nation. In the last two Plans and also in the second year of the Third Plan we have been trying very hard to increase production in agriculture.

Already an amount of Rs. 2,000 crores have been spent and, may be much more will be spent. Even then, with our growing population and shortfall in production we will not be able to achieve self-sufficiency in food production.

The reason for all this lies in one factor and that is the price. Unless and until there is a basic price given to the farmer for his produce and he is encouraged to grow more food with that as a guarantee, there is no possibility of the farmer taking the initiative and growing more food because, after all, it is a gamble that the farmer takes. Almost like the industry where a man does business or invests money, and naturally expects a return, it is the same with a farmer. A framer has not only to encounter the difficulties which are laid down by the Government but he has always to face the natural causes also, for example, shortage of rains and many other things.

There was a remark by Shrimati Yashoda Reddy recently that there are many hurdles in the way of a farmer. It appears to me that there are also hurdles in the way of Shri S. K. Patil because each and every time he assures the House as also says in his public speeches that he is going to hold the prices so that the farmer will have the incentive to grow more food, even then it just sounds like propaganda as never has this utterance been given effect to. He has never enforced this speech into action. I do not know but maybe that he has hurdles from the hon. Planning Minister who, I find, threatens that if the prices go up he will not allow that. This sort of rivalry which is going on should cease and they should realise the truth that the prices in the field of agriculture must come to a certain stage and they must remain there for the farmers to grow more food and give them the encouragement that is very much required today.

If a farmer goes to a co-operative bank and asks for a loan, he has difficulties there. In the other banks of the provinces or local banks also he faces difficulties. If he wants seeds, there is not enough seeds to go round the country. If he wants fertilisers, there is not enough fertiliser to go round the counry. Irrigation is still in a primitive stage. Without such things which are very necessary for his agriculture, how can he ever expect to grow more food or meet the demands of the nation? On the other hand, whenever he manages to produce enough, there is a threat of the buffer-stock which the Government is always holding. He is afraid that if he ever puts his produce in the market, may be he will not get the price that he expects. With these hurdles in the way of a farmer I do not think even in ten years' time Indian agriculture can be self-sufficient.

The Government must realise that is an issue which is a national issue and if other ministries or other people are hindering the way of progress of agriculture, they must cease to do that. They must give an incentive to the farmer which is badly required. Many of my hon. friends from the Opposition and also from the DMK stressed this point very much. One of the hon. Members from the DMK Party was stressing the point about rice, but it is not only rice, it would be any crop which is to be grown by the farmer which will face the same problem. Unless and until he will get the money for that crop, how can we expect him to gamble with his small holding or saving which he has? Today the times are very difficult for the farmer. A businessman or an industrialist could have credit. He can go and get money from his friends and from other people, but, I am afraid, the farmers do not have the same credit facility in the villages. The banias and the other businessmen are exploting him even today. With these problems it is the duty of the Government to realise that the farmer gets the incentive. I have no doubt that Shri S. K. Patil is quite

[Shri Solanki]

sincere in his promises that he wants the prices to be held up and that the farmer must get the incentive, but there is something coming in his way which makes him always say the thing and it never happens. If it goes on like that, I am afraid, the country will never have faith in his word. He must take some action and make the people see that he is going to bring his word of promise into proper action.

Secondly, the point that I want to touch is regarding my constituency. There are three taluks in my constituency which are growing cotton and there is a system of seeds quality certificate which is being issued by the Government. In that, a large number of farmers have had complaints that when they purchase seeds, some farmers are given the certificate and some are not given the certificate. The survey which is made in that area is of 60 per cent of land. What happens is, when the cotton inspectors go round the area, they survey 60 per cent of the big land holdings and leave out the small farmers, giving the certificates of quality to those big landlords and big farmers and excluding the small farmers. When the crop is ready and it is in the market, those people who have got the certificate get the market price but the small people, small farmers, who do not have the certificates, do not get the market price. What usually happens is, they are compelled to sell at a lower price to those who hold the certificates and eventually those people make the profit. What happens is that the cotton inspector appproaches those farmers who have not got the certificates and demands money for these certificates. I have got a proof where more than an amount of Rs. 1000 was demanded from the farmers for these certificates and I have even a proof that there are inspectors of cotton earning as much as Rs. 5000 per year from these illegal incomes as we call it. If this is not going to stop, there is going to be great dissatisfaction amongst the farmers. There are people who purchase seeds from the same stock. The villages are at a distance of one mile even and one village gets a certificate and the next one does not get a certificate. When crops are ready, both the crops are put in the same market. The farmers are face to face. Some have the certificates and they get the market price and others are disappointed because they do not have the certificates. This sort of injustice must stop.

Thirdly, I have to address to Shri Thomas, the Deputy Food Minister because when he was replying, he mentioned something about the dairy in Delhi. He said that their aim was to help the farmers to have healthy cattle and the main aim was that. Well, I have found out that in the dairy here, the milk which is sold by villagers is purchased by contractors and the Government buy milk from the contractors. There is no direct dealing of the Government with the farmers. Therefore, always there is a middle price and the farmer never gets a right price that he deserves for it. This sort of exploitation goes on. We cannot expect them to improve their cattle or livestock. It is the moral duty of the Government, if they have that aim in their mind, to give him a right price without having a third party in between which is exploiting the farmer.

The last thing that I have to say is regarding the cooperative farming. So many people have said that it is a failure, that it will never succeed. But I have one more thing to say about it that always when an ideal is put forward, there is a chance that people would accept it or not accept it. The cooperative farming is not something like making laws about factories and industries. It is something that a farmer holds dearly, that is, his land. If a man ist told to work on a machine and the next man comes to that machine, he does not have any attachment to that machine in a factory.

But in the case of land, where there is cooperative farming to be introduced—and the farmer knows that that land is everything that he has—and if you enforce that law there that that property is common, that it is to be shared by more than one, I am afraid that will not work well. This is something which is more sentimental and emotional to a farmer. Of course, only those people who hold land or who have their livelihood coming from that source will only understand this dogma or this obsession that they have for land. It is not going to be easy for the Government to change the sentiment which is rooted in the history of India for thousands and thousands of years.

Shri Kapur Singh: It is a good thing.

Shri Solanki: But the Government should realise that, because they may say this is an obsession. They should not be deprived of it because it is part and parcel of their life. Some farmers would even give their life for that property because their ancestors had fought for it and they have been deriving their subsistence from that source.

With these words, I conclude.

Mr. Deputy-Speaker: Shri Dafle; Shri R. S. Tiwary.

An Hon. Member: Those who stand up, may be given a chance.

Mr. Deputy-Speaker: Shri Rattan Lal; Shri Tulshidas Jadhav.

श्री तुलशीदास जाधव (नांदेड़) : उपाध्यक्ष महोदय, ऐग्रिकल्चर डिपार्टमेंट पर जो डिमांड है उसको सपोर्ट करते हुये मैं कुछ सुझाव देना चाहता हूं । यह जो लैंड का धंधा है इसको एक व्यवसाय मानना चाहिये । इसके बगैर इसमें जो खेडूत लोग काम करते हैं उनको शाश्वति नहीं मिलेगी । दूसरे जितने धंधे चलते हैं उनके बारे में जहां पर कुछ गारेंटी होती है कि उसकी इतनी इनकम होनी चाहिये और इतना एक्स्पेंडिचर होना चाहिये, वहां पर धंधे ठीक चलते हैं । लेकिन इस खेती के बारे में कोई ऐसी चीज नहीं है । काश्तकार और उसकी खेती का जो मामला है वह बिल्कुल अव्यवस्थित रूप से चलता है । देश भर में जो प्लैनिंग चलती है वह खेती के बारे में या काश्तकार के बारे में नहीं है । इसकी ओर सरकार का ध्यान जाना चाहिये । जिस तरह से अभी यहां शुगर केन के मामले में नार्थ इंडिया और साउथ इंडिया का सवाल उठा उस तरह का सवाल किसी भी अनाज के बारे में पैदा नहीं होता । उसकी वजह यह है कि शुगर केन के रेट के लिये यहां पर गारेंटी दी गई है । इस गारेंटी में यह देखा जाता है कि जो गन्ने के काश्तकार का एक्स्पेंडिचर होता है और जो इनकम होती है उसके हिसाब से गन्ने की खेती के लिये उसके पास इन्सेन्टिव है या नहीं । जिस तरह से यह शुगर केन के बारे में या काटन के बारे में है उसी तरह से अनाज के बारे में भी होना चाहिये । जो चीज खेत में होती है अगर उसके लिये गारेंटी नहीं मिलती तो वह धंधा ठीक तरह से नहीं चलेगा, वह नुक्सान में चलेगा । जब वह नुक्सान में चलता है तो फिर यह बात होती है कि उसको यह सहूलियत दे दो, वह सहूलियत दे दो । यह तो डील देने जैसी बात है । जहां पर किसान लोग काम करते हैं वहां कुछ हो जाये, बाढ़ आ जाये, सूखा पड़ जाय तो थोड़ी मदद दे दो । हम ने खेती के अन्दर देखा है कि कभी उस को कुछ तकावी दे दी गई, कभी कोई और चीज दे दी गई । जब तक देश में इस तरह के डोल्स चलते हैं तब तक मेरे अन्दर ऐसी भावना है कि जो हमारी पापुलेशन देहात के अन्दर रहती है उसके प्रति अनादर की भावना है । किसी भी दूसरे धंधे में ऐसी बात नहीं है ।

अगर देखा जाय तो हिन्दुस्तान में जितनी पापुलेशन आज है उतनी पापुलेशन आज चाइना को छोड़ कर कहीं भी नहीं

[तुलशीदास जाधव]

है। सन् १९५१ में हमारे देश की पापुलेशन ३६१ मिलियन थी, सन् १९६१ में ४३० मिलियन थी और १९७१ में यह बढ़ कर ५२७ मिलियन हो जायेगी। इस पापुलेशन में से २४९ मिलियन देहातों में रहती है, बाकी पापुलेशन अरबन है। इतनी बड़ी पापुलेशन को अगर सम्भालना हो तो उस के लिये हम को पहले प्रायोरिटी देनी चाहिये। लेकिन यह बात कहीं नहीं होती। न इस के लिये कोई प्लैनिंग है। सुबह कंसल्टेटिव कमेटी की एक मीटिंग हुई, उस में मैं ने एक सवाल पूछा था। लेकिन उस उत्तर से मुझे कोई सन्तोष नहीं हुआ। मैं जब रूस गया था और खेती की रिपोर्ट देखी उस का किस्सा मुझे याद आ गया। वहां पर ग्राम सभा के नाम से एक समिति है। उस में किस खेत में कितना अनाज तैयार करना है इस का कोटा दिया जाता है। वहां पर इस का पूरा हिसाब होता है कि किस जमीन में कौन सा अनाज पैदा करना है। उस के लिये एक प्लैन होता है। मुझ से उस के सम्बन्ध में बात चीत वहां पर हुई, उस में अंकों की कोई गलती हो गई। जब हम लोग स्टालिनग्रेड आये तो जो ग्राम सभा का प्रेजिडेंट था उस के ध्यान में यह बात आई कि उस अंक में कोई गलती है। उस के बाद उस ने मास्को को फोन किया और उस के बाद जो वहां के ऐग्रीकल्चर मिनिस्टर थे वह प्लेन से स्टालिनग्रेड आये और कहा आप इंडियन डेलिगेशन में हैं। जो फिगर्स में गलती हो गई है उस को कृपा करके आप सुधार लें। कहने का तात्पर्य यह है कि एक मामूली सी बात पर भी वहां पर इतना ध्यान दिया जाता है जब कि यहां पर यह बात नहीं है। मैं डा० राम सुभग सिंह के लिये नहीं कह रहा हूं क्योंकि वे तो बड़े सिंसिअरली काम करते हैं। उन से मेरी विनती यह है कि जब तक वे इस विभाग में हैं तब तक जिस तरह से काम होना चाहिये उस का प्लैन बनाया जाय। बिना प्लैन किये हुए हमारा काम ठीक से नहीं होगा। खाली काश्तकारों को फर्टिलाइजर दे देने से या कुंए खुदवा देने से ही काम नहीं चलेगा। खेती के बारे में पूरी तरह से प्लैनिंग होनी चाहिये। आजकल ग्राम पंचायत है, आप उस को प्लैन दीजिये कि इस गांव में इतनी ज्वार की उपज होनी चाहियें, इतनी कपास होनी चाहिये। आप काश्तकार को इस रीतिसे प्लैन दीजिये कि उस को सहुलियत मिले। तभी वह काम करने के लिये तैयार होगा।

आप ने देखा कि शुगर केन का पैसा मिलता है काश्तकार को। उस के लिये आप ८० टन पर एकड़ गिनते हैं। जैसा डिप्टी मिनिस्टर महोदय ने कहा, आप हमारे शुगर केन के खेत में चले जाइये। जैसे मां बच्चे को सम्भालती है उसे खिलाती पिलाती है, जिस तरह से उस का पालन पोषण करती है, जब उसी तरह एक एक गांव का पालन पोषण होगा तभी खेती की उपज बढ़ सकती है। इसलिये मेरा कहना है कि काश्तकार खुद पूरी तरह से मेहनत करने के लिये तैयार हैं, चौबीस घंटे काम करने के लिये तैयार हैं, लेकिन जितनी सहूलियत उन को चाहिये वह नहीं मिलती है। एक तो उस को प्लैन दी जाये और उस के बाद उस को प्राइस की गारेन्टी दी जाय। यह दो बातें हैं उस के जीवन में जिस से उस को शाश्वति मिल सकती है। काश्तकार का जितना खर्च होता है उस के हिसाब से उस को पैसा मिल जाय तो कोई जरूरत नहीं कि आप यह सोचिये कि इतना दिया गया या उतना दिया गया। मैं आज पूछता हूं कि कितने आर्टिकल्स में प्राइस गारन्टी काश्तकार को दी गई है।

एक माननीय सदस्य : प्राइस गारेन्टी नहीं दी गई है।

दूसरे माननीय सदस्य : ट इज नाट ए गुड थिंग ।

श्री तुलशीदास जाधव : इट इज नाट एगगुड थिंक । सिर्फ कपास और गन्ने के बारे में गारेन्टी दी है कि फ्लोर प्राइस उस की क्या हो । यह तो मैं रेट्स के बारे में कहना चाहता हूं ।

दूसरी बात यह है कि अगर देखा जाय कि दुनिया में पर एकड़ ईल्ड क्या है तो वह चीज हमारे यहां बगैर इन्टेन्सिव कल्टिवेशन के नहीं हो सकती । मेरे पास आज मीट्रिक टन्स में दुनिया भर के आंकड़े मौजूद हैं । अगर देखा जाय तो जहां हिन्दुस्तान में एक एकड़ में चावल १२२४ मीट्रिक टन होता है वहां पाकिस्तान में १२४० मीट्रिक टन होता है, चाइना में २६०६ मीट्रिक टन होता है, जापान में ३६५२ मीट्रिक टन होता है, अमरीका में ३२०२ मीट्रिक टन होता है और इजिप्ट में ४६६० मीट्रिक टन होता है । यह आंकड़े तो मैं ने चावल के दिये । गेहूं की वही हालत है, गन्ने की वही हालत होती है । हिन्दुस्तान में जो गन्ना होता है वह एक एकड़ में ३२८४७ मीट्रिक टन होता है जबकि इजिप्ट देश में वह ८००६४ मीट्रिक टन होता है । अपने उत्पादन से तीन गुना और चौगुना पड़ता है । जब वहां इतना उत्पादन हो सकता है तो हमारे यहां क्यों नहीं हो सकता ।

एक माननीय सदस्य : यह फिगर गलत है ।

श्री तुलशीदास जाधव : मैं ने इसको सरकारी किताब में से लिया है ।

श्री क० ना० तिवारी : उपाध्यक्ष महोदय, अनेक माननीय सदस्यों ने प्राइस के बारे में कहा है । मेरा भी ख्याल है कि जब तक प्राइस ठीक नहीं होगी, तब तक इंसेंटिव ग्रोअर्स को नहीं मिल सकता और उत्पादन नहीं बढ़ सकता । भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है । यहां पर ८२.२ परसंट लोग देहातों में रहते हैं और १७.८ पर सेंट लोग शहरों में रहते हैं । यहां वार्षिक कम्पाउंड ग्रोथ आफ पापुलेशन २ पर सेंट है । इन सब को खिलाने का भार किसानों के ऊपर है । इस के साथ-साथ उनको विदेशी मुद्रा प्राप्त करने के लिए कच्चा माल भी पदा करना पड़ता है । इस का भी भार किसानों पर है । चाहे कृषि विभाग कोई भी उपाय करे, जब तक सिंचाई का पूरा प्रबन्ध नहीं होता और बाढ़ को नहीं रोका जाता तब तक उस का टारगेट पूरा नहीं हो सकता । किसानों को खास कर प्राकृतिक प्रकोपों का भी सामना करना पड़ता है । मेरे पास समय कम है, इसलिय मैं आंकड़ों में नहीं जाना चाहता । लेकिन इनसे मालूम होता है कि वर्षा का कोई ठिकाना नहीं है । कभी-किसी देश में ज्यादा वर्षा हो जाती है तो कभी कम होती है, कभी बाढ आती है, तो कभी सूखा पड़ जाता है । इस कारण जब तक सिंचाई का ठीक प्रबन्ध नहीं होता तब तक सरकार जो टारगेट मुकर्रर करता है वह पूरा नहीं हो सकता । इसलिए कृषि विभाग के लिए यह सब से जरूरी है कि वह प्लानिंग विभाग से मिल कर सिंचाई के लिए ज्यादा से ज्यादा रुपया खर्च करे ।

१९५८-५९ में ३२३.६ मिलियन एकड़ जमीन जोत में थी जिस की १८ पर सेंट ही पटती रही है । और बाकी जमीन के लिए सिंचाई का कोई इन्तिजाम नहीं है । अगर रासायनिक खाद दी जाती है तो जब तक पानी का पूरा प्रबन्ध न हो तो हम जितनी पैदावार लेना चाहते हैं वह हम को नहीं मिल सकती । इकाफे की रिपोर्ट में लिखा है कि नेचुरल कलेमिटीज की वजह से, पानी का प्रबन्ध ठीक न होने के कारण और क्लाइमेट के कारण जो सरकारें टारगेट

[श्री क० ना० तिवारी]

रखती हैं वह पूरा नहीं हो पाता। उसकी रिपोर्ट में लिखा है :

"In the ECAFE region as a whole, stretching from Iran to Japan, real incomes dropped in 1962 by about 2 per cent, mainly as a result of less favourable harvest and lower export earnings".

तो मैं सबसे पहले कृषि विभाग का ध्यान इस ओर आकर्षित कराना चाहता हूं कि सिंचाई का पूरा प्रबन्ध होना चाहिये।

अनेक माननीय सदस्यों ने कहा है कि पैदावार बढ़ाने का किसान को तब तक कोई इंसेंटिव नहीं हो सकता जब तक कि उसकी पैदावार का उचित दाम न तय किया जाए। जो १२ पर सेंट लोग शहरों में रहते हैं उनको खिलाने का भार भी किसानों पर ही है और इन शहर के लोगों के हाथों में अखबार है। यही लोग ज्यादा हल्ला करते हैं कि गल्ले का भाव बढ रहा है और इसलिए सरकार घबरा कर गल्ले के भाव को कम करती है। किसान मुल्क की आमदनी का लगभग ५० पर सेंट देता है। विदेशी मुद्रा कमाने में भी उस का बहुत बड़ा हिस्सा है। इस के इलावा उस पर अनेक करों का भार है। प्रान्तीय कर है, पंचायती कर है, केन्द्रीय कर है। इस के अलावा चन्दे का भार उस पर है। मेहमानों का और अफसरों की खातिर का भी उस को खर्च करना पड़ता है। एक माननीय सदस्य ने बहुत ठीक कहा है कि किसान अपनी खेती की आमदनी से अपने बच्च को स्कूल या कालिज की शिक्षा नहीं दिलवा सकता। जो चीजों के दाम बढ़ गए हैं, उनका भार भी उस पर पड़ रहा है। पोस्टकार्ड का दाम बढ़ गया है, करोसीन का दाम बढ़ गया है और दूसरी चीजों का दाम बढ़ गया है। इस सब खर्च को किसान को वहन करना पड़ता है।

किसान की उपज का हिसाब आज तक कृषि विभाग के पास नहीं है कि किसान को अपना गल्ला पैदा करने में कितना पैसा लगता है। सरकार के पास ऊख का, धान का या गहूं का किसी का हिसाब नहीं है। अगर किसान की उपज का हिसाब कर के उस की जो लागत लगती है उस पर उस को कोई लाभ नहीं दिया जाये गा तो किसान की हालत रद्दी होती चली जाएगी।

इस के इलावा उनको कर्ज लेना पड़ता है। हम ने हिसाब लगा कर देखा है कि जो किसान २५ एकड़ इर्रीगेटेड जमीन की खेती करती है उस को साल में १५०० रुपया कर्ज लेना पड़ता है तब वह खेती चला है। यह बड़ी कंट्रोवर्शल बात है। देहातों के लिए इनकम की सीलिंग की गयी लेकिन अरबन इनकम्स की सीलिंग नहीं की गयी। इस प्रश्न को अन्य माननीय सदस्यों ने भी उठाया है। इस तरह आप देखें कि जितने भार हैं वे कृषकों के ऊपर आ जाते हैं। ऐसी स्थिति में सरकार को चाहिये कि वह इन सारी बातों पर ध्यान दे।

दूसरी बात है कर्ज की। आज सुबह हमको एक एफ० ए० ओ० की किताब दी गयी है। उस में भी कहा गया है कि यह प्राबलम दुनिया भर में है। केवल हिन्दुस्तान में ही यह प्राबलम नहीं है। उस में लिखा है :

"Out of the present world population of about 300 crores, probably well over 100 crores of human beings are not getting enough food for proper physical development."

यह हालत है सारी दुनिया की। और हिन्दुस्तान को भी यह लड़ाई लड़नी पड़ रही है। तो किसानों को अपनी खेती के लिए रुपये पैसे की कमी है। इस में एक सजेशन दिया गया है, एक्सटेंशन आफ एग्रीकल्चरल क्रेडिट के लिए, और उस

का प्रोग्राम भी रखा गया है । लेकिन हम ने देखा है कि जो रुपया किसान को सरकार द्वारा दिया जाता है वह देहात के बनिए द्वारा दिये गये रुपये से महंगा पड़ता है। अगर किसान को सौ रुपया सरकार से लेना है तो उस का ५० रुपया ऊपर खर्च हो जाता है । इस का हिसाब किताब इतना काम्प्लीकेटेड है कि किसान तबाह हो जाता है । इस को सिम्प्लीफाई करना चाहिए । दूसरे जो वसूली होती है वह सब चीजों की एक साथ होती है । हमारे प्रान्त में आज कल वसूली हो रही है, तो इनकम टक्स की वसूली हो रही है, सेल्स टक्स की वसूली हो रही है, नेशनल डिफेंस के लिए वसूली हो रही है और एग्रीकल्चरल लोन की वसूली हो रही है । ये जितनी वसूलीयां हैं ये सब एक साथ हो रही हैं । नतीजा यह है कि किसान को अपनी जमीन जायदाद और मवेशी बेच कर सरकार का कर्ज अदा करना पड़ रहा है । मैं यह नहीं कहता कि सरकारी कर्जा वसूल न किया जाए। लेकिन निवेदन यह है कि यह वसूली किस्तों के आधार पर हो तो किसान को उतना भार नहीं प्रतीत होगा और उसे अपना सब कुछ गिरवी नहीं रखना पड़ेगा । इसलिए मेरा निवेदन है कि किसानों को जो कर्जा दिया जाय वह बिल्कुल हलके टर्म्स पर दिया जाय और वह किश्तों में उन से वसूल किया जाय ।

ईख की खेती के बारे में जैसा कि श्री विभूति मिश्र ने तथा अन्य कुछ लोगों ने कहा है, इस बारे में मैं भी उन से एक राय रखता हूं । एक सैकेंड में एक बात जरूर कह देना चाहता हूं कि अभी इस विषय को लेकर जो नौर्थ और साउथ में एक कंट्रोवर्सी सी पैदा हो गई है उस के लिए मेरा यह कहना है कि अगर साउथ में चीनी का उत्पादन बढ़ता है तो बड़ी खुशी की बात है और उसे बढ़ना ही चाहिए । लेकिन उत्तर प्रदेश और बिहार में अभी तक यह देखा जाता है कि यहां की जो शगर इंडस्ट्री है, यहां के जो केन ग्रोअर्स हैं, उन के सम्बन्ध में कुछ इस तरह की पालिसी प्रान्तीय सरकारों और सैंट्रल गवर्नमेंट की है जिस की वजह से गन्ने की क्रौप जोकि उत्तर प्रदेश और बिहार के किसानों की मनी क्रौप होती है और जिससे कि उन को पैसा मिल सकता है, जितना मिलना चाहिए वह उनको नहीं मिल पाता है । अगर उस इंडस्ट्री को नुकसान हुआ तो लाजिमी तौर पर किसानों पर इस का बड़ा प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और उन को बहुत बड़ा नुकसान उठाना पड़ेगा । इस लिए इस ओर भी मैं मंत्री जी का ध्यान आकर्षित करता हूं और आशा करता हूं कि वे इस पर भी अवश्य ध्यान देंगे ।

12.02 hrs.

The Lok Sabha then adjourned till Eleven of the Clock on Thursday March 21, 1963/Phalguna 30, 1884 (Saka).